इतिहास दिवाकर

त्रैमासिक अनुसंधान पत्रिका

वर्ष ११ अंक ३ आश्विन मास कलियुगाब्द ५१२० अक्तूबर २०१८

मार्गदर्शक :
डॉ० शिवाजी सिंह
इरविन खन्ना
चेतराम गर्ग

सम्पादक :
डॉ. राकेश कुमार शर्मा

सह सम्पादक
डॉ. विवेक शर्मा

व्यवस्थापक
प्यार चन्द परमार

सम्पादन सहयोग :
डॉ० रमेश शर्मा
डॉ० ओम प्रकाश शर्मा

टंकण एवं सज्जा :
रवि ठाकुर

सम्पादकीय कार्यालय :
ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान,
नेरी, गांव व डाकघर - नेरी
जिला-हमीरपुर-१७७००१(हि०प्र०)
दूरभाष : ०९४१८४-८५४१५

मूल्यः
प्रति अंक - १५.०० रुपये
वार्षिक - ६०.०० रुपये

itihasdivakar@yahoo.com
chetramneri@gmail.com

अनुक्रमणिका

सम्पादकीय

उद्‌बोधन

भारत सांस्कृतिक राष्ट्र है	डॉ. मोहन राव भागवत	३

संवीक्षण

मनु और मनाली की ऐतिहासिकता : एक वैज्ञानिक अवलोकन	डॉ. भाग चन्द चौहान	१३
अटल जी की जीवन यात्रा	डॉ. इन्द्र सिंह ठाकुर	२५
अटल जी का संघ सम्बन्ध एवं राष्ट्र चिन्तन	ऋषि कुमार	३४
भागवतपुराण कालीन इतिहास	डॉ. कृष्ण मोहन पाण्डेय	४२

ध्येय-पथ

गतिविधियां	प्यार चन्द परमार	४८

सम्पादकीय

अभ्यास से व्यवहार का मामला

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ विश्व का सबसे बड़ा गैर राजनीति संगठन है। इसका आधार सांस्कृतिक राष्ट्रवाद है। यह व्यक्ति निर्माण पर जोर देता है। इस विचार की व्यापकता किसी न किसी रूप में सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त है। यह किसी को अपना विरोधी नहीं मानता। जो इसे अपना विरोधी मानता है उसे यह खुला निमन्त्रण देता है – ''आओ! संघ कार्य पद्धति को देखो। यदि इस में कुछ गलत है तो बताओ। भारत का शाश्वत चिन्तन ***सर्वे भवन्तु सुखिनः*** *की दिशा में किया जाने वाला प्रयास संघ शाखा पद्धति में सिखाया जाता है। यह अभ्यास से व्यवहार का मामला है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के दिल्ली प्रान्त के प्रचार विभाग ने १७ से १६ सितम्बर, २०१८ को दिल्ली विज्ञान भवन में* ***भविष्य का भारत*** *विषय पर प्रबुद्ध नागरिकों के लिए कार्यक्रम का आयोजन किया। जिसमें सरसंघचालक माननीय मोहन राव भागवत जी ने संघ विचारधारा तथा उससे सम्बन्धित विषयों पर प्रबुद्ध नागरिकों द्वारा पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दिए। १८ सितम्बर को दिए गए उनके उद्‌बोधन का एक भाग इस अंक में प्रकाशित किया जा रहा है। यह उनकी उद्‌बोधन शैली पर ही है। इसमें कोई फेर-बदल नहीं किया गया है।*

भारत के पूर्व प्रधानमन्त्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी का देहावसान अपूर्णीय क्षति है। वाजपेयी जी अपने आप में एक संस्था थे। उनका व्यक्तित्व विशाल था। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ विचारधारा में पालित–पोषित वे प्रथम प्रधानमन्त्री थे जिनकी छवि और व्यक्तित्व सब को जोड़ता था। इतिहास दिवाकर परिवार ऐसी महान विभूति की दिवंगत आत्मा की शान्ति की कामना करता है।

इस वर्ष भारत में बरसात रौद्र रूप में आई। केरल राज्य का आधे से ज्यादा भाग जल मग्न हो गया था। हिमाचल प्रदेश में सितम्बर मास में हिमपात होना तो प्रकृति का प्रकोप ही माना जाएगा। इन प्राकृतिक आपदाओं से जन–धन, पशु व फसलों सहित सब प्रकार से अत्याधिक क्षति हुई। सरकार द्वारा विकास योजनाएं बनाते समय केवल भौतिक सुख पर ही ध्यान न देकर, बल्कि प्रकृति से अत्याधिक छेड़छाड़ के कारण आने वाली परेशानियों पर ध्यान देना भी अधिक महत्त्वपूर्ण है।

डॉ. भाग चन्द चौहान द्वारा प्रस्तुत शोध पत्र नये आयामों को खोलने वाला है। आगामी दिनों में त्यौहारों की श्रृंखला– दशहरा, दीपावली, भैयादूज आदि त्यौहारों पर सभी के मंगल की कामना।

विनीत,

डॉ. राकेश कुमार शर्मा

उद्बोधन

भारत सांस्कृतिक राष्ट्र है

डॉ. मोहन राव भागवत

मंच पर उपस्थित माननीय संघचालकगण। उपस्थित सभी महानुभावों, माताओं, बहनों। संघ कार्य व्यक्ति निर्माण का कार्य है, व्यक्ति निर्मित होने के बाद समाज में वातावरण बनाते हैं। समाज के आचरण में परिवर्तन लाने का प्रयास करते हैं और ये पूरा स्वावलम्बी पद्धति से और सामूहिकता से चलने वाला काम और मन मर्जी का काम है। इसमें आना-जाना बिना शुल्क है और कोई जबरस्ती का मामला चल भी नहीं सकता क्योंकि जबरदस्ती करने के लिए हाथ में कुछ है नहीं, अपनी दोस्ती ही केवल है। अब जैसे-जैसे कार्य बढ़ता है तो स्वयंसेवकों को शिक्षा मिली है कि संघ केवल एक ही काम करेगा व्यक्ति निर्माण का, लेकिन स्वयंसेवक समाज के हित में जो-जो करना पड़ेगा वो करेगा। शक्ति बढ़ती है तो संघ चलाने के लिए जितने स्वयंसेवक हैं उनको छोड़कर बाकी स्वयंसेवक खाली तो नहीं बैठते। समाज में उनको जो समझ में आता है उसके अनुसार वो किसी न किसी कार्य को हाथ में लेते हैं। कोई और कर रहा है तो अनुशासन में रहकर उसके साथ जुट जाते हैं। अच्छा अपना तो नया काम खड़ा करते है। ऐसे समाज-जीवन के लगभग सभी क्षेत्रों में स्वयंसेवकों ने कार्य खड़े किए, विविध संगठन हैं। वो सब स्वतन्त्र, स्वायत व स्वावलम्बी है। संघ के किसी बैठक के निर्णय से कोई भी संगठन नहीं चला। वो स्वयंसेवकों का अपना किया हुआ है और वो अपने भरोसे उसको चलाते हैं। सहयोग चलता है, स्वाभाविक चलता है परिचय है, स्वयंसेवक हैं सब तो विचार की दृष्टि उनको मिली है, संस्कार मिला है तो संघ में परिचय है तो आना-जान चलता है, परामर्श चलता है, साथ देना भी चलता है। संघ के स्वयंसेवकों को यह भी सीख है कि अच्छे काम को कौन कर रहा है यह मत देखो, वो अपना समर्थक है कि विरोधी है ये मत देखो, अगर वो प्रमाणिकता से कर रहा है व समाज की भलाई के लिए कर रहा है तो उसमें सहयोग उन्हें करना चाहिए। उसके अनुसार स्वयंसेवकों का सहयोग मिलता रहता है। जैसा मैंने कल कहा समन्वय बैठक योजना तय करने के लिए नहीं होती, समन्वय बैठक ऐसा करने वाले स्वयंसेवकों को, जो संघ के बाहर क्षेत्रों में काम करते हैं उनको अपने स्वंयसेवकत्व का वातावरण मिले इसलिए आयोजित की जाती है। ये मैं फिर से इसलिए बता रहा हूं कि बहुत बार प्रश्न आता है कि राजनीति से क्या है? संघ को कोई राजनीतिक महत्वाकांक्षा है क्या? क्योंकि लगभग जमाने का चलन ऐसा दिखता है कि व्यक्ति समर्थ बन जाता है और सामर्थ्य जहां से प्राप्त किया उस क्षेत्र में कुछ कर लेता है। आगे उसकी इच्छा राजनीति में जाने की होती है। लेकिन संघ को सम्पूर्ण समाज को जोड़ना है और राजनीति समाज-जीवन के अनेक विषयों को देखती है तो उन विषयों में मतभेद होते ही हैं, होना स्वाभाविक भी है। विचार अलग-अलग प्रकार के रहते हैं और

दलबन्दी हो जाती है, दल अलग-अलग बन जाते हैं तो विरोध भी खड़ा हो जाता है। राजनीतिक दल और सारे समाज का जुड़ना ये कुछ ही मात्रा में एक साथ चल सकते हैं बहुशः दल अलग-अलग हो जाते हैं और इसलिए संघ के जन्म से ही संघ ने ये निश्चित किया है कि राजनीति से हमारा संगठन दूर रहेगा। स्पर्धा की राजनीति नहीं करेगा, चुनाव नहीं लड़ेगा, संघ का कोई भी पदाधिकारी किसी भी राजनीति दल में पदाधिकारी बिल्कुल नहीं बन सकता और चुनाव की, वोटों की इस राजनीति से संघ से दूर रहता है। डॉ. हेडगेवार स्वयं एक राजनीतिक कार्यकर्ता थे और बहुत कुशल राजनीतिक कार्यकर्ता थे। विद्यार्थी जीवन काल में कलकता में उन्होंने एक कागजी आन्दोलन चलाया और अंग्रेज सरकार का एक प्रस्ताव पराभूत कर दिया। ये जो राष्ट्रीय विद्यालय और कालेज चल रहे थे आन्दोलनकारी छात्रों के लिए तो उनको मिलने वाला प्रमाण पत्र, डिग्री इसको अवैध करने का कानून अंग्रेज सरकार ला रही थी। अब समाज में बड़ा आन्दोलन इस विषय को लेकर खड़ा करना संभव नहीं था। तो डॉक्टर हेडगेवार ने कलकते में घूम-घूमकर हर एक बस्ती के प्रमुख लोगों से बातचीत की और उनको इतना बताया कि अगर कोई आपको आकर पूछे कि आपके यहां इस प्रस्ताव के विरोध में कोई सभा हुई तो आप कहिए हां, आप गए थे मैं गया था, किस-किस के भाषण हुए, अलग-अलग नाम दिए इनके भाषण हुए बताना। और क्या हुआ। और बहुत भीड़ थी अतः एकमत से पारित हो गया कि ये डिग्रियां बररकार रखनी चाहिए। ऐसा बताया और फिर समाचार पत्र में समाचार छपवाये कि अमुक मोहल्ले में सभा हुई, ३००० लोग थे, भाषण हुआ और प्रस्ताव आया और सरकार के खिलाफ प्रस्ताव एकमत से परित हो गया। ऐसे समाचार लगातार प्रकाशित होने का पता चला तब ब्रिटिशों के कान खड़े हो गए। उन्होंने अपने लोग जानकारी प्राप्त करने के लिए लगाए। सबको प्रमाण मिले कि ऐसी सभाऐं हुई थी। लेकिन रिपोर्ट जो गई सरकार के पास कि इसके बारे में बहुत बड़ा जन असंतोष है, इसको करेंगे तो असंतोष का एक कारण आ बैल मुझे मार की तर्ज पर बुलाया ऐसे हो जायेगा। इसलिए उस कानून को सरकार ने लाया नहीं। ऐसे कुशल वो राजनेता थे। विदर्भ में काम करते समय प्रमुखता से उनका नाम सबके सामने आता था विशेषकर तरुण वर्गों में बहुत लोकप्रिय था। स्वयं तरुण आयु के थे। लेकिन संघ का काम सम्पूर्ण समाज को जोड़ने का काम है इसलिए अपने जन्म से ही संघ ने स्वयं तय किया है कि रोजमर्रा की राजनीति में हम नहीं जायेंगे। हमारा मत है कि संघ की विचारधारा के नाते संघ के स्वयंसेवकों के मत है। नीति के बारे में मत है। कौन राज्य करे ये तो चुनाव जनता करती है। परन्तु कैसा चले राष्ट्रहित में, इस राष्ट्रनीति के बारे में हमारे मत हैं और हम पहले से बोलते हैं सार्वजनिक रूप से बोलते हैं और जितनी शक्ति है उतना उसके अनुसार हो, इसका प्रयास भी करते हैं। वो प्रयास हमारा लोकतान्त्रिक रीति से ही होता है। संघ की राजनीति से परे भेजे इसका मतलब वो घुसपैठियों के बारे में न बोले ऐसा नहीं है। यह सब राष्ट्रीय प्रश्न है। राजनीति की उसमें भूमिका है। प्रमुख भूमिका है परन्तु प्रश्नों के सुलझने का व न सुलझने का परिणाम पूरे देश पर होता है। ऐसे विषय में संघ अपना मत रखता है। जो एक दल चलता है उस दल में स्वयंसेवक क्यों है। उस

दल में बहुत सारे पदाधिकारी क्यों है? राष्ट्रपति जी हैं स्वयंसेवक हैं तो इसलिए और ये जो लोग क्यास लगाते हैं कि नागपुर से फोन जाता होगा और बात होती होगी बिल्कुल गलत बात है। एक तो वहां काम करने वाले राजनीतिक कार्यकर्ता या तो मेरी आयु के हैं या मेरे से सीनियर हैं और संघ कार्य का जितना कार्य अनुभव उनको राजनीति का है। उनको अपनी राजनीति चलाने के लिए किसी के सलाह की आवश्यकता नहीं है। हम उसके बारे में कुछ नहीं जानते। हम सलाह दे भी नहीं सकते। परिचित है तो हाल-चाल पूछते हैं। उनको सलाह चाहिए तो वह पूछते हैं अगर हम दे सकते हैं तो हम देते हैं। परन्तु उनकी राजनीति पर हमारा कोई प्रभाव नहीं। सरकार की नीतियों पर हमारा कोई प्रभाव नहीं है। वो हमारे स्वयंसेवक हैं। उनको विचार दृष्टि सब मिली हैं। वो भी समर्थ हैं अपने-अपने कार्यक्षेत्र में उन विचारों को प्रत्यक्ष करने के लिए। ऐसा स्वतन्त्र, स्वायत व स्वावलम्बी होकर उनका काम चलता हैं और चलना चाहिए ऐसी हमारी इच्छा है। देश में, देश की व्यवस्था में पावर नाम की जो चीज हैं उसका जो सेंटर संविधान से तय हुआ है वही रहेगा। कोई बाहर का दूसरा केन्द्र खड़ा हो, ये गलत बात है हम ऐसा मानते हैं। इसलिए ऐसा हम कभी करते नहीं। और इसलिए संघ का राजनीति से सम्बन्ध क्या है? क्यों उसी एक दल में ज्यादा स्वयंसेवक हैं। अब ये तो हमारा प्रश्न नहीं है। बाकी दलों में जाने की इच्छा क्यों नहीं होती ये उनको विचार करना है। हम किसी स्वयंसेवक को किसी एक विशिष्ट राजनीतिक दल का काम करने के लिए नहीं कहते हैं। राष्ट्र के लिए एक विचार को लेकर एक नीति का स्वप्न लेकर काम करने वालों के पीछे खड़े हो जाओ ऐसा कहते हैं। वह नीति किसी की भी हो सकती है। ये जरूरी नहीं हैं कि एक दल की, दूसरे दल की नीति नहीं है। ऐसा नहीं है। ऐसा होता भी है। राष्ट्रहित को सोचकर स्वयंसेवक नागरिक के नाते उनका इतना करते हुए उतना करते हैं। संघ के कार्य में दायित्वधारी कार्यकर्ता राजनीति में बिल्कुल पड़ते नहीं। स्वयंसेवक स्वतन्त्र हैं वह कर भी सकता है उसका मन करे तो नहीं भी कर सकता है। अपने विवेक से स्वयंसेवक चलते हैं रोजमर्रा के जीवन में। ऐसा अपना जो काम चलता है संघ का प्रभाव बढ़ता है तो उसके परिणाम वहां भी दिखते हैं, सब क्षेत्र में दिखते हैं। हम वो प्रभाव उत्पन्न करने के लिए काम नहीं कर रहे हैं। वो होता है हम क्या करें। तो इस प्रकार और ये संघ का और राजनीति का सम्बन्ध चला है। राष्ट्रनीति के बारे में हम बोलते हैं और हमारी शक्ति है, हम जिसको उचित मानते हैं उसको करवाने की तो उसको हम लगाते जरूर हैं ये हम छुपे-छुपे नहीं करते। ये डकें की चोट पर करते हैं। क्योंकि व्यक्ति निर्माण ये हमारा मुख्य काम हैं वहीं हम करते हैं। लेकिन जो निर्मित व्यक्ति है वह निठल्ले नहीं बैठे रहेंगे। वे नागरिक हैं देश के। सब लोगों के जैसा उनका भी देश के जीवन के समस्त अंगों में अपना सहभागी रहना अपेक्षित है वह रहता है। उसमें किसी दल का स्वार्थ नहीं। किसी विचारधारा के प्रभाव की बात नहीं।

केवल भारत के राष्ट्रहित का भाव रहता है। किसी के प्रति बैर नहीं और किसी के प्रति अधिक दोस्ती नहीं। ये संघ का स्वभाव है। कल और भी एक उल्लेख आया था। ये जो स्वतन्त्र, अलग व स्वायत सम्बन्धी मामला हैं, महिलाओं का विचार करते समय भी हमारा विचार ऐसा है। हमारे देश

में प्राचीन समय में महिलाओं के बारे में जो विचार हैं तो उनको अत्यन्त बड़ा स्थान दिया है। शक्ति स्वरूपा, जगदम्बा का रूप हम मानते हैं। एक तरफ विचार में ऐसा है और दूसरी तरफ व्यवहार में देखा तो उनकी हालत बहुत खराब है। अब ये तो ठीक है कि उनको भगवान बनाकर मन्दिर में बिठाकर भी पूजने की जरूरत नहीं और उनको एकदम दासता की कड़ी में धकेलने की भी जरूरत नहीं। वो महिला समाज का एक हिस्सा होने के नाते समाज जीवन के सब प्रयासों में बराबरी की हिस्सेदार है, बराबरी की जिम्मेवार है और उस तरह ही उनके साथ व्यवहार होना चाहिए। लेकिन ये इस ढंग से नहीं होना चाहिए कि बेचारी महिला समाज का हम उद्धार करेंगे। जो देखते हैं हम नित्य अनुभव भी आप लोगों को आता होगा कि कई मामलों में महिलायें पुरुषों से ज्यादा समर्थ हैं। जो काम पुरुष करते हैं उसी काम को वो अधिक अच्छा कर सकती हैं। यह कई क्षेत्रों में आज सिद्ध हो रहा है। उनको सशक्त करने की जरूरत है उनको वो स्वतन्त्रता देने की जरूरत और ऐसे काम करने के लिए उनको प्रबुद्ध बनाने की जरूरत है। तो अपने घर से प्रारंभ करके समाज के क्षेत्र तक सर्वत्र मातृशक्ति जागरण का काम होना चाहिए। संघ की इच्छा है। संघ के स्वयंसेवक और संघ के साथ जुड़े हुए परिवारों की महिलायें, जो अनेक संगठन चलाती हैं उसमें बराबरी से चल रही महिलायें हैं मिलकर ये स्वयंसेवक काम करती हैं। महिला और पुरुष परस्पर पूरक हैं। जीवन बनना हैं तो इन दोनों का होना और बराबरी से सारा भार उठाकर काम करना, निर्णय से लेकर दायित्व तक सारी बातें बराबरी से उसमें सहभागी होना इसकी आवश्यकता राष्ट्र निर्माण के लिए रहेगी यह संघ का सुविचारित मत है।

संघ का विचार हिन्दुत्व का विचार है और संघ का मतलब संघ ने खोजा हुआ नहीं है। अपने देश में परम्परा से चलता आया हुआ विचार है और थोड़ा सा प्रसार का भ्रमजाल दूर हटाकर हम देखेंगे तो सबका माना हुआ सर्वसम्मत विचार है। लेकिन भ्रम खड़े होते हैं और उसके कारण हैं और उन कारणो के निर्माण में सबसे बड़ी भूमिका स्वंय हिन्दू समाज की ही है। हिन्दुत्व उस मूल्य समुच्चय का नाम है– विविधता में एकता, समन्वय, त्याग, संयम व कृतज्ञता। इसका आधार जो सत्य है उसका अन्वेषण हमारे यहां किया गया। दुनिया सुख की खोज बाहर कर रही थी। बाहर करते-करते थक जाती थी, ऐसे समय में हमारा यहां हमारे पूर्वजों में से किसी को बुद्धि हुई कि जरा अन्दर भी देखें और फिर जड़ जगत के विज्ञाननिष्ठ अध्ययन के साथ-साथ अन्तर जगत के आध्यात्मिक अध्ययन का भी प्रारम्भ हुआ और उसमें से अस्तित्व की एकता का सत्य केवल तर्क, से प्रत्यक्ष अनुभूति से हमारे पूर्वजों को प्राप्त हुआ। उसकी प्रत्यक्ष अनुभूति रखने वाले महान पुरुषों की परम्परा तब से आज तक अपने देश में पूर्णतः विद्यमान है। तर्क की बात नहीं, थ्योरी की बात नहीं। स्वामी विवेकानन्द जी ने रामकृष्ण परमहंस को जब पूछा कि क्या ईश्वर को आपने देखा है? उन्होंने बहुत लोगों को पूछा। गोल-मटोल बातें होती थी क्योंकि तर्क से तो बात चलती नहीं, वास्तव में क्या है? यही बात रवीन्द्रनाथ ठाकुर जी के पिता से उन्होंने पूछी। तब वो उत्तर नहीं दे सके। उन्होंने कहा कि तुम्हारी आंखों में बड़ा तेज है। विवेकानन्द जी ने कहा वो मुझे नहीं चाहिए। मेरे प्रश्न का उत्तर दो, भगवान को आपने देखा है क्या?

तो फिर उनके तर्क से कोई उत्तर नहीं आया। अपने कॉलेज में पढ़ते समय फिलॉसोफी पढ़ते समय 'ट्रांस' इस शब्द पर चर्चा चली तो उनके अंगेज प्रोफेसर ने बताया कि इसका सही अर्थ आपको जानना है तो दक्षिणेश्वर जाओ। वहां रामकृष्ण परमहंस के पास वे पहुंचे और एक-दो बार मिलने के बाद उन्होंने वो पूछा कि क्या भगवान को आपने देखा है? तो रामकृष्ण परमहंस जो मुश्किल से चौथी पास रहे होंगे, पागल जैसे लगते थे। उन्होंने कहा हां, देखा है। नित्य देखता हूं। तुमको जितना स्पष्ट देखता हूं उससे ज्यादा स्पष्ट देखता हूं। भगवान से बात भी करता हूं और तुम अगर मेरे बताये रास्ते पर चलोगे तो तुम भी ये कर सकोगे। अब इस बात को इतने आत्मविश्वास के साथ बता सकने वाले लोग आज भी अपने देश में मिलते हैं। उस सत्य के आधार पर, वह सत्य क्या है इसका वर्णन, जैसा मैंने कल कहा, अलग-अलग है और परस्पर विरोधी भी है। परन्तु एक सत्य है, वो अस्तित्व की एकता का सत्य है और उसके चलते दुनिया की विविधताओं का स्वीकार सम्मान करो, उनका उत्सव करो। अपनी-अपनी विविधता पर श्रद्धापूर्वक पक्के चले रहो, बाकि सबकी विविधता का सम्मान करो और मिल-जुलकर चलो। ये संदेश देने वाला जो मूल्य समुच्चय है वो मूल्य समुच्चय हिन्दू है, हिन्दुत्व है। ये नाम तो बाहर से मिला ये बात सही है क्योंकि आप प्राचीन ग्रन्थों में जाओगे तो ये शब्द आपको कहीं मिलेगा ही नहीं, भारत में। आज भी बहुत से विद्वान, संत भी हिन्दू नहीं कहते, सनातन कहते हैं, धर्म कहते हैं। अन्य सम्प्रदाय में धम्म कहते हैं। हिन्दू नाम बाद में आया, किसी परिस्थिति विशेष के कारण आया।

आचार्य महावीर प्रसार द्विवेदी ने एक लेख लिखा, २६ के दशक की बात है, उसमें मैंने पढ़ा अब क्या सही, गलत है देखिए। उनकी उप्पत्ति ये है कि झरतृष्ट जब भारत से पहुंचे पर्शिया यानी आज का इरान तो वहां के समाज ने उनको गुरु के नाते स्वीकार किया और गुरु का परिचय पूछा तो उन्होंने कहा कि परिचय क्या बतांऊं? हम तो सब मानव की एकता में विश्वास करने वाले लोग लेकिन आपको गांव, नाम जानते है तो मैं इतना बताता हूं कि हमारे पूर्वज सिन्धु के उधर से आये थे। पारस की भाषा में 'स' को 'ह' होता है, उसने अपने गुरु को हिन्दू गुरु बना दिया। वहां से व्यापार इसराइल के साथ होता था तो यहूदियों के पास भी शब्द पहले पहुंचा। वहां से समुद्री मार्ग से अपने पश्चिम किनारे पर व्यापारियों को पता चला और धीरे-धीरे व्यापारियों की जानकारी के अनुसार वो हमारे देश के बौद्धिक जगत में पहुंचा तो शायद नवीं शदी से वो हमारे ग्रन्थों में आने लगा। उसके पहले नहीं था। लोकभाषा में तब भी नहीं आया था। लोकभाषा में तो बाहर के आक्रमकों ने जिनको अपनी विचारधारा का प्रभाव चाहिए था उन्होंने जब इस देश की इतने प्रकार की विचारधाराओं को सबको एक करके पीटना शुरू किया तो शायद हमारे लोगों ने विचार किया होगा कि ये कहां से हुआ। तो फिर उनको ये उत्तर मिला कि आप सब लोग हिन्दू हो इसलिए आप सबको हम बदल रहे हैं, तो वो लोकभाषा में आया, लोकभाषा का शब्द, सन्त पहले उठाते हैं, तो सन्तों की वाणी में पहली बार, उसके बाद गुरुनानक देव ने जैसे कहा तुर्कस्थान खसमाना गया, हिन्दुस्थान डराया, काया कपड़ टुक टुक

होसी हिन्दुस्थान समाल सी बोला। हिन्दू शब्द तब से लोगों में प्रचलित है लेकिन अब वो चिपक गया है तो क्या करेंगे। जैसे मेरा, आपका नाम है, वो तो हमारी परमीशन लेकर नहीं रखा गया, लेकिन वो चिपक गया। दूसरे नाम को प्रतिसाद नहीं देंगे। इसलिए ये जब अस्तित्व की एकता परस्पर सहयोग सबका साथ चलना, क्योंकि इसका एक ओक्षुक ये भी आता है कि व्यक्ति का समाज के हित से विरोध नहीं है। समाजवाद में व्यक्ति को दबाने की जरूरत नहीं और व्यक्ति को उन्नति के कारण समाज में शोषण करने की जरूरत नहीं। व्यक्ति और समाज परस्पर विकास में साथ चल सकते हैं और सारा मानव समाज विकास और पर्यावरणवाद में कोई विरोध नहीं है वह साथ चल सकता है। विकास भी हो सकता है। पर्यावरण भी ठीक। क्योंकि सृष्टि और समाज का भी झगड़ा नहीं है। सारा विश्व एक ही अस्तित्व होने के कारण है। सब लोग साथ चल सकते हैं। साथ सबकी उन्नति हो सकती है और सब लोग श्रेयस् को प्राप्त कर सकते हैं। यह भी उसका एक औक्षुक आता है। तो ये सारा जो विचार है ये अगर हम बताने लगते हैं तो लोग कहते हैं कि हिन्दू विचार को बोल रहे हैं। उसके लिए पर्यायी शब्द भी जो बनते हैं वह इसी शब्द से निकले हैं। मैंने ऐसा सुना है मुझे प्रत्यक्ष मालूम नहीं। लेकिन हज यात्रा पर जाने वाले भारत के मुसलमानों का भी वहां पंजीयन जो होता है उसमें उनको माना जाता है कि ये हिन्दू भी मुसलमान हैं और इटलेक्चुअल सर्कल में जो चर्चा चलती है उसमें एक प्रकार के विचारों को इंडिक थॉट कहते हें। वो इंडिक भी इसी भाषा का शब्द है। बहुत दूर जब हम भारतीय कहते हैं तो वो केवल भारत नाम होता रहा है। तो भारत एक स्वभाव का नाम है। ये सारे शब्द समानार्थी शब्द हैं। लेकिन इसके आशय को स्पष्ट रूप से बनाने वाला एक शब्द है हिन्दू। इसलिए संघ इस हिन्दू शब्द को आग्रहपूर्वक लेकर चलता है लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि जो भारत शब्द हैं उससे हमारा कोई झगड़ा है या विरोध है। हम जानते हैं कि उनको कहना वही है। हमारे लिए ये शब्द आग्रह का शब्द है। उनके लिए वह होगा। बहुत अच्छी बात है। इसको लेकर झगड़ा होने की कोई बात नहीं है। क्योंकि आशय की बात तो एक ही है – विविधता में एकता। इस मूल्य समुच्चय के आधार पर एक धर्म बनता है एक संकल्पना बनती है कि जीवन में कैसे चलना चाहिए किस दिशा में चलना चाहिए। धर्म शब्द को लेकर भी बड़ा कन्फ्यूजन है क्योंकि यह शब्द केवल भारतीय भाषाओं में मिलता है। भारत के बाहर ये शब्द नहीं मिलता। धम्म शब्द, धर्म शब्द ये भारत की देन है। अब वैसा दूसरा क्या है बाकी देशों में नहीं है। थोड़ा मिलता-जुलता क्योंकि धर्म के साथ कर्मकांड भी आता है तो कर्मकांड विशेष प्रकार का, विशेष प्रकार की पूजा, विशेष प्रकार के मसीहा ऐसा जो बनता है उसको रिलीजन कहते हैं इसलिए अपनी भाषा को छोड़कर जब हम विदेशी भाषा में बोलने लगते हैं तब हम रिलीजन कहते हैं और रिलीजन का ट्रांसलेशन धर्म करते हैं। इसलिए गलतफहमी पैदा होती है। ये धर्म यानी किसी एक विशेष देश के समाज की बपौती नहीं है। ये पूरे मानव का वैश्विक धर्म है। हिन्दू धर्म आज जिसको कहते हैं वह वास्तव में हिन्दुओं का धर्म नहीं है। हिन्दुओं का धर्म हिन्दू धर्म शास्त्र के नाम से नहीं है। वह मानव धर्म शास्त्र उसको कहा जाता है।

हिन्दू शब्द आने के पहले वह रचा गया। वह किसी एक के लिए नहीं था। वह सब के लिए था। हमारे देश में जितनी आत्मधारायें हैं सिक्ख, बौद्ध, जैन, सनातनी, आर्य समाजी इन सब लोगों ने जन्म तो भारत के समाज में लिया लेकिन उन्होंने जो कहा है वो सारा का सारा सम्पूर्ण विश्व के लिए है। क्योंकि भारत कभी भी अपनी परम्परा में अपने आपको विश्व मानवता से अलग नहीं माना। माता च पार्वती देवी पिता देवो महेश्वरः बान्धवा शिववास्त्राश्च स्वदेशो भुवनत्रयाः। त्रिभुवन हमारा स्वदेश है। सारी पृथ्वी हमारा कुटुम्ब है। बसुधैव कुटुम्बकम् ये हमारा स्वभाव रहा है। क्योंकि अस्तित्व की एकता को जानने से भारत का उद्‌गम है। उस अस्तित्व की एकता का भान सबको करा देने का प्रयोजन से भारत का अस्तित्व बना है। तब से हम इन सब प्रकार की विविधताओं को लेकर एक समाज के नाते चल रहे हैं। एक राष्ट्र के नाते चल रहे हैं। हमारा राष्ट्र ये प्राचीन है। उसका अस्तित्व आप उसकी कल्पना अगर पाश्चात्या की व्यवस्था से करेंगे कि जहां स्ट्रेट है वहां नेशन है। स्टेट गया कि नेशन आया। यह हमारा कन्सैप्ट कभी नहीं रहा। स्टेट्स बदलते रहे। राष्ट्र हमारा सांस्कृतिक राष्ट्र है। इस धर्म में ये जो शाश्वत मूल्यों का भाग है वह शाश्वत धर्म है। आचार्य धर्म बदलना चाहिए। देश काल परिस्थिति और जिस व्यक्ति के सम्बन्ध में विचार है वह व्यक्ति इन पर निर्भर करता है कि उस समय वहां पर उसका धर्म क्या है आचार्य धर्म? डॉ. आम्बेडकर साहब ने हिन्दू कोड बिल की चर्चा में संसद में पूछा था विरोध करने वालों को, कि आप धर्म को क्या समझते हो। वेल्युज या कोढ़। आप कोढ़ को धर्म मान रहे हो। कोढ़ बदलना है। बदलना ही चाहिए। उसको में बदल रहा हूं। वेल्युज वही है आप चर्चा करे। धर्म की ओर देखने की हमारी दृष्टि ये है। वह वेल्यूज है। उस समय का कोढ़ उस वैल्यू के साथ-साथ जितना चलता है, उतना स्वीकार्य है। जो वेल्यू के विपरीत है उसको बदलना चाहिए। कितना बदल हुआ है हिन्दु परम्परा में। देवी-देवता भी बदल गए। वैदिक काल के देवता आज नहीं है। मध्य काल के देवताओं के स्वरूप बदल गए। नए-नए सम्पद्राय निकल जाते हैं। ये हिन्दुत्व की संकल्पना खाने-पीने के विशिष्ट व्यवहार में किसी से झगड़ने वाली नहीं है। ये हिन्दुत्व की संकल्पना अमुक एक पूजा को लेकर समर्थन नहीं करती। ये हिन्दुत्व की संकल्पना विशिष्ट भाषा, विशिष्ट प्रान्त, प्रदेश, इसको नहीं चलाती। सृष्टि के साथ मानव समाज व्यक्ति का सुख और समाज का सुख दोनों एक साथ रखकर चले, इसलिए अर्थ, काम वो तो है ही उसकी मान्यता है। इच्छाएं हमारी होती हैं उसकी तृप्ति करने से सुख मिलता है। तृप्ति के साधन चाहिए तो अर्थ पुरुषार्थ भी है। लेकिन इन दोनों को हम सबको मिलकर चलना है। अकेली उन्नति नहीं करनी। मेरे विकास में इन सबका विकास होना चाहिए। इसका भान रखकर चलाने वाला अनुशासन है। वो अनुशासन धर्म है। तथागत का वचन है – सव्य पापस्य व्याकरणम्। क्यों भई क्यों पाप नहीं करना। दूसरे को होता हुआ भी तकलीफ। अरे वह दूसरा नहीं है वह भी तुम ही हो और इसलिए सबके कल्याण में अपना कल्याण अपने कल्याण से सबका कल्याण ऐसा जीवन जीने का अनुशासन और सबका कल्याण हो इसलिए सबके हितों का एक संतुलित समन्वय, बैलेंस ये वास्तव में हिन्दुत्व है। सभी भारत से निकले सम्प्रदायों का जो सामूहिक

मूल्य बोध है उसका नाम हिन्दुत्व है। लेकिन अब सम्प्रदाय है, प्राचीन है, चले हैं– हमारे धर्म है तो है तो हम मान्य करते हैं। सभी विविधताओं की अपने यहां स्वीकार्य ही है। भारत की पहचान वह बनी है। यह वैश्विक धर्म है। केवल भारत के लिए नहीं है। लेकिन भारत में इसका निर्माण हुआ और एक ट्रस्टी के नाते समय-समय पर विश्व को इस ज्ञान को देने वाला भारत है। वैदिक ऋषियों के समय हुआ सारे विश्व में गया अध्यात्म। तथागत के काल में उनकी प्रेरणा से सारी दुनिया में इस धम्म का प्रचार हुआ। आज भी अनेक सन्त महात्मा जाते हैं और इन बातों को बताते हैं। वो कनवर्सन नहीं करते। रमण महर्षि के पास सर पॉल ब्रेंटन आए थे उन्होंने कहा कि मुझे हिन्दू बना लो। रमण महर्षि ने कहा तुम अच्छे ईसाई हो अच्छे इसाई बनो उसी में अच्छे बनो। तुम्हें हिन्दू बनने की जरूरत नहीं हैं क्योंकि इन सब विविधताओं को, सब दर्शनों को, सब तत्वज्ञान को, हम मानते हैं कि वो सब सत्य है। सही है। रामकृष्ण परमहंस जैसे सन्त ने इन सबका आसनाओं का प्रत्यक्ष आचरण करके उनके अन्तिम उपलब्धि तक जाकर देख लिया और बाद में बताया ये हिन्दुत्व है। ये सब विविधतायें रहेंगी। विशेषतायें रहेंगी। उसका स्वीकार होगा- सम्मान होगा। लेकिन ये हमसे आपस में अलगाव का भेद का कारण नहीं बनेगी क्योंकि ऐसा भेद नहीं करना, ऐसी सीख देने वाली भारत भूमि के हम पुत्र हैं। इसलिए हम जिसको हिन्दुत्व कहते हैं, उस मूल्यबोध, उससे निकली हुई यह संस्कृति। उसके साथ दूसरा घटक है देशभक्ति। वो भारत की पहचान है। भारत इसके लिए है और इसलिए इसका आचरण इस भारत वर्ष में लगातार हो रहा है। सब प्रकार की परिस्थिति में हुआ। जब आक्रामकों के पैरों तले हमारी धरती रौंदी जा रही थी, तब भी इस धर्म का आचरण जितना जैसा बनता है उतना किया गया। जब अपने ही स्वार्थी लोगों के द्वारा इसके आचारण को मूल्यों के विपरीत बिगाड़ दिया गया तो उसको वापिस लाइन पर लाने वाले अनेक सन्त महात्मा हुए, उनसे ही हमारे सम्प्रदाय बने। इसलिए प्रस्थान बिन्दु सबका एक है और आचरण का उपदेश सबका एक है। देशकाल व परिस्थिति के अनुसार दर्शन और विधि आचार्य धर्म सबने अलग-अलग बताया है और इसलिए इस मूलभूत एकता को देखकर साथ चलना इस स्वभाव का नाम हिन्दुत्व है। किसी का हित गौण नहीं है। सबका हित एक साथ होना चाहिए। मेक्जिमम गुड ऑफ द मेक्जिमम पीपल। इसके आगे जाकर हमारे पूर्वजों ने कहा सर्वेति सुखिनः सन्तु, हवई सब्ब मंगलम्, सर्वत्त दा भला। किसी भी भारतीय पंथ, सम्प्रदाय में जाओ ये आपको मिलेगा, यह सब जगह मिलेगा। यहां तक जो खल है, दुष्ट है उनका भी भला ही, चिन्ता है सबन की। प्रसायदान महाराज ने लिखा तो दुष्टों का नाश हो ऐसा वे नहीं कहते। वो कहते हैं खलान्ची वेन्कटी सांडयने। ये दुष्ट स्वभाव के लोगों का जो टेढ़ापन है वो चला जाए। हमारे यहां उद्घोष चलता है, सनातन परम्परा में भी। धर्म की जय हो, धर्मी की जय हो, अधर्मी का विनाश हो ऐसा नहीं कहते। धर्म की जय हो, अधर्म का विनाश हो, प्राणियों में सद्भावना हो। ये जो अपनी विचारधारा है, जिसकी आज के विश्व को नितान्त आवश्यकता है। वो मांग रही है। उस विचारधारा को अपने आचरण में चरितार्थ करने वाला समाज भारत में खड़ा करना है और वही हम सबको जोड़ता है। कोई एक भाषा

हमको जोड़ती है क्या, नहीं। कोई एक देवी-देवता हमको जोड़ते है क्या, नहीं। खान-पान, रीति-रिवाज का एक तरीका हमारा समान नहीं है। हमारे प्रान्त है, हमारी भाषा है, हमारी जाति है, उपजातियां सब है। लेकिन ये सब होने के बावजूद भी हम सब भारत माता के पुत्र उस वैश्विक संस्कृति के अनुयायी हैं। ऐसा हम संकल्प लेकर चले हैं। जहां-जहां विश्व में गए हैं, हमने कोई लड़ाई नहीं की, हमने किसी का राज्य नहीं जीता। हमने किसी की सम्पति को लूटा नहीं। जहां गए वहां ज्ञान दिया, सभ्यता दी। अन्य देशों के लोग आकर प्रभावशाली अपने देश में बनते हैं और बाद में जाते हैं वहां वापस। उनकी जो स्मृति आ रही थी, वो अच्छी नहीं रहती थी किसी भी देश में। अन्य देश के लोग आए, उन्होंने हम पर राज किया चले गए। अन्य देश के लोग आए, उन्होंने हमको प्रभावित किया, चले गए। इसको अच्छा नहीं बताते लेकिन एकमात्र भारत हैं, जिसके दुनियां के जिन-जिन देशों में वास्तव में हुआ है उसकी स्मृतियों को आनन्द से, आदरपूर्वक वहां के लोग बताते हैं। आज भी उसके अवशेष चल रहे हैं। कहीं पर मूर्तियां मिलती है, कहीं पर शिल्प खड़े करते हैं नये सिर से, महाभारत की रामायण की कथाएं चलती है। रामलीलाएं चलती हैं, आनन्द के साथ चलती है। पूजा पद्धति बदल गई। न वहां पर रहवर रहे, न वहां पर बौद्ध रहे। आज मुसलमान है, लेकिन वो कहतें हैं हमने अपने पूर्वज नहीं बदले। ये मधुर स्मृतियां, एकमात्र चमत्कार भारत की ही क्यों है? इसीलिए है कि भारत इस संतुलन को, अनुशासन को विश्व कल्याण की भावना से सबको अपना मानकर ले गया है। ये चित्र हमारे यहां खड़ा करना है और इसलिए जिस हमारे सुजल, सुफल, मलयज, शीतल मातृभूमि ने हमको कभी आक्रमण की चिन्ता में प्राचीन समय में रखा नहीं। चारों ओर से हम प्रोटेक्टेड थे। आज के जैसे जाने-आने की साधन नहीं थे। तो हम सुरक्षित थे, समृद्धि थी। तो हमने कभी लड़ाई करना सीखा ही नहीं, जो आएगा उसको बसा लिया। तुम भी रहो, भाषाएं हमारी भी पहले से अनेक हैं। देवी-देवता हमारे पहले से अनेक हैं। उससे कुछ नहीं बिगड़ता। मानवता के धर्म को लेकर चलो और इसलिए डॉ. अम्बेडकर साहब ने ये कहा है कि स्वातंत्र्य, समता और बन्धुता के आदर्श मैंने फ्रांसीसी राज्य क्रान्ति से नहीं लिए। इसी मिट्टी में उपजे तथागत बुद्ध के विचारों से मैंने यह प्रेरणा पाई है क्योंकि स्वतन्त्रता आई तो समता की लोभला और समता लाने गए तो स्वातंत्र्य को संकुचित करना पड़ता है। एक साथ दोनों लाना है तो बन्धुभाव की आवश्यकता है और वो बन्धुभाव ही धर्म है। बंधुभाव का आधार क्या है? हमारे पूर्वज समान है, हमारी सांस्कृतिक विरासत सबकी सांझी है और हमारी मातृभूमि एक है। इसलिए मैं कहता हूं उसका विरोध भी होता है कभी-कभी। लेकिने मेरे हृदय की भावना यह है कि भारत वर्ष में जो है वो सब हमारी भाषा में। वह अपने आप को कहें न कहें उनको स्वतन्त्रता है और दूसरा कुछ कहते हैं, हमको उसमें कोई गिला-शिकवा नहीं। हमारे मन के अपनत्व को कम करने वाली बात नहीं है। लेकिन वो सब एक पहचान के लोग है। राष्ट्र के नाते हम उसको हिन्दू पहचानते हैं। किसी को मालूम है, वो कहते हैं हम हिन्दू हैं, उनको गौरव भी उसका। किसी को मालूम है, लेकिन उतना गौरव उनके मन में नहीं है, कोई बात नहीं। किसी को मालूम है लेकिन कुछ मटेरियल

कंसीडरेंशंन ऐसा कहा जाता है या पॉलिटिकल करेक्टनेस ऐसा कहा जाता है। उसके रहते वो कभी कहेंगे नहीं, सार्वजनिक रूप से। निजि रूप से मिलते हैं तो कहते भी हैं कभी-कभी। और कुछ लोग हैं कि जो भूल गए हैं, जिनको भूलाया भी गया है। ये सब लोग हमारे अपने हैं, भारत के हैं। हमारी दृष्टि से इस सम्पूर्ण समाज का संगठन हिन्दू संगठन है। जैसे परीक्षा में प्रश्न पत्र हाथ में आता है तो आसान सवाल पहले करते हैं, बाद में कठिन सवालों को हाथ लगाते हैं। वैसे पहले तो जानते हैं कि हम हिन्दू हैं उनका हम संगठन करेंगे। लेकिन वो इनके खिलाफ नहीं करेंगे, इनके लिए करेंगे। एक अच्छा जीवन खड़ा करके, उस जीवन में सब लोग भी बराबरी से सहभागी हो, ऐसा हम प्रयास करेंगे। क्योंकि हमारा कोई शत्रु नहीं है, न दुनिया में है न देश में है। हमारी शत्रुता करने वाले लोग होंगे उनसे अपने को बचाते हुए भी हमारी आकांक्षा उनको समाप्त करने की नहीं, उनको साथ लेने की है, जोड़ने की है। ये वास्तव में हिन्दुत्व है।

संवीक्षण

मनु और मनाली की ऐतिहासिकता : एक वैज्ञानिक अवलोकन

डॉ. भाग चन्द चौहान

Vedic Cosmology is the only one in which the time scales correspond to those of modern scientific cosmology. Vedic Cosmology is yet another ancient Vedic science which can be confirmed by modern scientific findings. …… the cosmology of the Vedas closely parallels modern scientific findings.

- Carl Sagan, British Cosmologist

प्रस्तावना

भारतीय काल-गणना और आधुनिक विज्ञान की काल-गणना में आश्चर्यजनक रूप से मेल होना, जिसे प्रो. कार्ल सागन अपनी पुस्तक 'कोरमोंस' में प्रस्तुत करते हैं, भारतीय ऋषियों की अद्भुत प्रज्ञा, मेधा और मानसिक पराकाष्ठा का परिचायक है। मन्त्रद्रष्टा ऋषि समाधिस्थ होकर उस परब्रह्म से दिव्य साक्षात्कार कर वेद-मन्त्रों को रचता है। रुचिकर बात तो यह है कि इन वेद-मन्त्रों के गूढ़ रहस्यों को विभिन्न कालखंडों में अनेकों ऋषियों द्वारा लोक रुचि और क्षमता के अनुसार दर्शनों, पुराणों, स्मृतिओं और अनेकों शास्त्र ग्रन्थों में विस्तारपूर्वक प्रस्तुत किया गया है। चार वेदों में ऋग्वेद आज निर्विवाद सम्पूर्ण विश्व में सबसे प्राचीन उपलब्ध लिखित ग्रन्थ माना जाता है। ब्रह्माण्ड की रचना के बारे में ऋग्वेद में कई सूत्र हैं, जिसमें हिरण्यगर्भ, नासदीय और पुरुष सूक्त के सूत्र सृष्टि की रचना के उस सत्य को व्यक्त करते हैं। ऋग्वेद के सूत्र १०/१९०/१-३ के अनुसार

ऋतं च सत्यं चाभीद्धात् तपसोऽध्यजायत।
ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः।।१।।
सुमुद्रा दर्णवादधि संवत्सरो अजायत।
अहोरात्राणि विद्धद्विश्वस्य मिषतो वशी।।२।।
सूर्या चन्द्रमसौ धाता यथापूर्वम कल्पयत्।
दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः।।३।।

भाव यह है कि परमेश्वर के दीप्तिमान तप से ऋत और सत्य उत्पन्न हुए। उससे आकाश उत्पन्न हुआ। आकाश से संवत्सर उत्पन्न हुआ। परमेश्वर ने दिन और रात बनाये, सूरज और चांद बनायें यह सब उसने पूर्वकल्प के अनुसार बनाए। पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्युलोकों को भी बनाया। इन सब का वैज्ञानिक अर्थ निकाला जाये तो सबसे पहले कुछ भी नहीं था, प्रकृति के नियम (ऋत और सत्य) बनें। फिर स्पेस-टाइम (आकाश) का निर्माण हुआ तो उस आकाश में सूरज, चांद, सितारे और

अनगिनत निहारिकायें बने। ब्रह्माण्ड की यह सम्पूर्ण निर्माण गाथा का वर्णन आधुनिक विज्ञान भी लगभग ऐसे ही करता आया। ऋग्वेद का सूत्र आगे कहता है कि आकाश से ही (आकाशीय पिण्डों और निहारिकाओं के आधार पर) काल-गणना (संवत्सर) का निर्माण हुआ (किया गया)। यह इस बात की पुष्टि करता है कि भारतीय काल-गणना पूर्णतया वैज्ञानिक है, क्योंकि यह खगोलीय पिण्डों की गति को आधार मानकर बनायी गई है। इसके अतिरिक्त सूत्र पूर्वकल्प की भी बात करता है, जो सृष्टिचक्र होने की पुष्टि करता है, जिसे आधुनिक विज्ञान अभी तक न स्वीकार करता है और न ही नकारता है।

भारतीय ग्रन्थों के अनुसार 'ब्रह्मा' भगवान विष्णु के संकल्प मात्र से उनकी नाभि कमल से उत्पन्न होकर सम्पूर्ण सृष्टि की रचना करते हैं और 'मनु महाराज' ब्रह्मा के मानस-पुत्र माने जाते हैं। संस्कृत में 'मन' धातु से 'मनु' शब्द की व्युत्पति हुई है। अतः मनन व चिन्तन करने से जो उत्पन्न हुआ वह मनु है। मनु ब्रह्मा के मन से पैदा हुआ वह आदि पुरुष है, जिसने सृष्टि के सृजन में मनुष्य जाति को उत्पन्न किया और समाज को सुचारू रूप से चलाने के लिए एक संविधान दिया। भाषा विज्ञान के विद्वान कहते हैं कि 'मानव', 'मनुष्य' और यहां तक कि अंग्रेजी का 'मैन' (Man) शब्द की उत्पत्ति मनु से ही हुई है। हिमाचल की पहाड़ी भाषा में मनुष्य को 'माहणू' कहा जाता है, जो 'मनु' से ही बिगड़ा हुआ शब्द माना जाता है।

काल गणना में मनु का शासन काल 'मनु-काल' या 'मनु' का अन्तराल' होता है जो 'मन्वन्तर' कहलाता है। यह 'मनु और 'अन्तर' दो शब्दों के संधि योग से बना है। इस तरह मनु राजाओं के नाम से उनके काल में अलग-अलग मन्वन्तर स्थापित होते रहे, जैसे प्रथम मनु 'स्वयंभू' होने से 'स्वयम्भू मन्वन्तर' माना जाता है। मानव सृष्टि के संचालन के लिए मनु के साथ एक मन्त्रिमंडल होता है, जिसमें सप्तर्षि, देवगण, इन्द्र तथा मनु-पुत्र आदि शामिल होते हैं, जो कि स्वाभाविक रूप से विभिन्न मन्वन्तर में अलग-अलग होते रहते हैं। श्रीमद्‌भागवत पुराण ३/११/२४ के अनुसार

मन्वन्तरेषु मनवस्तद्वंश्या ऋषयः सुराः।
भवन्ति चैव युगपत्सुरेशाश्चानु ये च तान्।।

अर्थात् प्रत्येक मनु इकहत्तर चतुर्युगी से कुछ अधिक काल तक अपना अधिकार भोगता है। प्रत्येक मन्वन्तर में भिन्न-भिन्न मनुवंशी राजा लोग, सप्तऋषि, देवगण, इन्द्र और उनके अनुयायी साथ-साथ ही अपना कार्य निर्वहन करते हैं और अधिकार भोगते हैं।

शास्त्रों के अनुसार ब्रह्मा के जन्म से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति और मृत्यु से सम्पूर्ण संहार होता है। अतः एक ब्रह्मा की आयु का अर्थ ही ब्रह्माण्ड की आयु से बनता है। ब्रह्मा की आयु १०० वर्ष मानी गयी है जो कि ३११.०४ खरब (३१ नील, १० खरब, ४० अरब) मानव वर्ष बनते हैं। ब्रह्म का एक दिन = एक कल्प = १४, मन्वन्तर + एक संधि-काल = १००० महायुग = ४३२ करोड़ वर्ष और एक

मन्वन्तर = ७१, महायुग + एक संधि काल = ३०.८५ करोड़ वर्ष, जबकि एक महायुग = ४३ लाख २० हजार वर्ष होता है। एक प्रकार ब्रह्मा की आयु का एक सेकिण्ड लगभग 1 लाख मानव वर्ष के बराबर बैठता है। काल गणना के अनुसार जन्म से आज तक ब्रह्मा के ५० वर्ष पूरे हो चुके हैं और ५१वां साल चल रहा है, जिसे 'द्वितीया परार्ध' कहते हैं, इस प्रकार अब तक कुल १५५.५ खरब वर्ष बीत चुके हैं। आधुनिक विज्ञान की माने तो ब्रह्माण्ड की आयु लगभग १५ अरब वर्ष के लगभग है जो कि अंकों से तो ठीक बैठती है, लेकिन खरब की जगह अरब है और एक दशमलव का भी अन्तर दे रहा है। यह शोध का विषय है, लेकिन दोनों इस बात को तो अच्छी तरह से स्वीकारते हैं कि ब्रह्माण्ड की आयु अरबो-खरबो में चलती है।

पुराणों में कुल चौदह मनुओं का उल्लेख मिलता है जिनके कार्यकाल से ब्रह्मा का एक दिन बनता है जिसे 'कल्प' कहते हैं। एक कल्प में सृष्टि की रचना होती हैं, तो दूसरे में प्रलय होता है। एक कल्प में कुल चौदह मन्वन्तर होने से ब्रह्मा के प्रत्येक दिन में कुल १४ मनु सृष्टि की रचना करते हैं और राज्य करते हैं। इस तरह से आजकल ब्रह्मा के जीवन का ५१ वां वर्ष का पहला दिन (श्वेतवारह कल्प) चल रहा है और अब (सन् २०१८) तक १९७ करोड, २९ लाख, ४९ हजार, १२० वर्ष बीत चुके हैं। इस कल्प में प्रथम मनु 'स्वयंभू' हुए और उसके बाद अब तक कुल छः मनु हो चुके हैं अर्थात् इस प्रकार छः मन्वन्तर बीत चुके हैं - स्वयंभू, स्वरोचिष, उतमाज, तमस, रेवत, चाक्षुष। आजकल सातवां वैवस्वत मन्वन्तर चल रहा है, जिसमें वैवस्त्वत मनु राज्य कर रहे हैं। वैवस्वत मन्वन्तर के लगभग १२ करोड़ वर्ष बीत चुके हैं, अतः अभी तक इस मन्वन्तर के २७ महायुग बीत चुके हैं और २८वां महायुग के भी सतयुग, त्रेता और द्वापर युग बीत कर कलियुग का प्रथम चरण चल रहा है। इस क्रम में अब तक कलियुग के भी लगभग ५००० वर्ष बीत चुके हैं। यह ५१२०वां वर्ष चल रहा है। कलियुग का आरम्भ महाभारत के समाप्त होने पर और कृष्ण स्वर्गारोहण तथा द्वारिका नगरी के जलमग्न होने से माना जाता है।

ब्रह्माण्ड और पृथ्वी के इतिहास में हुई विभिन्न घटनाओं को यही ऋषि वेद शास्त्रों में इस प्रकार से कहते हैं, तो आधुनिक युग में इन तथ्यों को जनमानस तक पहुंचाने के लिए उनका वैज्ञानिक सत्यापन का कार्य करना अति आवश्यक हो जाता है। इसी प्रेरणा के चलते इस कड़ी में मनु और मनाली की ऐतिहासिकता का एक वैज्ञानिक अवलोकन विषय भी लिया गया है। इस शोध पत्र में जल प्लावन के समय हिमालय की तलहटी में मनु

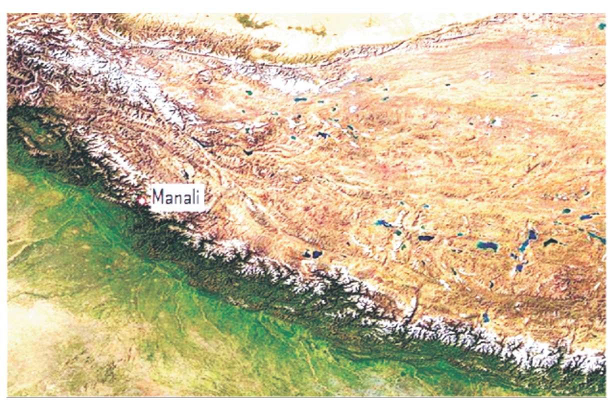

की नाव का रुकने की घटना का सत्यापन भूगर्भीय कालखण्ड और वैज्ञानिक तथ्यों के साथ मिला कर पुष्टि की जा रही है। अर्थात् जल-प्लावन और मनु की नाव का मनाली स्थान पर भूखण्ड से टकरना जैसी घटना का विज्ञान के मानकों के आधार पर काल-मान निर्धारण करना ही इस शोध पत्र का मुख्य लक्ष्य है।

शास्त्रीय साक्ष्य

मतस्य पुराण, विष्णु पुराण, मनुस्मृति और अन्य ग्रन्थों के अनुसार प्रत्येक मन्वन्तर के अन्त में पृथ्वी जल-मग्न होती है और प्रलय की साक्षी बनती है। ब्रह्मा की आयु के प्रत्येक पल, प्रहर, दिन, सप्ताह, अहोरात्र, महीना और वर्ष में सृष्टि के सृजन में महत्वपूर्ण बदलाव होते हैं और देशीय प्रलय होते हैं। इसी प्रकार का एक और संदर्भ बाइबिल में पैगम्बर नूह द्वारा सेमेटिक जाति को प्रलय से नौका द्वारा बचाने का वर्णन भी आता है। यह घटना पामीर देश के उत्तर पश्चिमी भाग में अरारत पर्वत की तलहटी में घटी थी, ऐसा माना जाता है।

अतः प्रत्येक युग और महायुग परिवर्तन के समय नैमितिक प्रलय चलते रहते हैं। शास्त्रों में कहा जाता है कि युग परिवर्तन में जब पृथ्वी जल-मग्न हुई तो वैवस्वत मन्वन्तर के मनु को हिमालय की उपत्यका में आश्रय मिला। इस घटना की पुष्टि स्थानीय और क्षेत्रीय लोक-कथाएं व लोकगाथाएं भी करती हैं। वर्णन आता है कि जल-प्लावन के समय मनु की नाव हिमालय की धरती के साथ जहां टकराई थी वह स्थान आज 'मनाली' के नाम से जाना जाता है। 'मनाली' शब्द मनुआलय अर्थात् 'मनु का घर' से बना माना जाता है। विभिन्न पुराणों और महाभारत के आख्यानों के अनुसार भारी जलप्रवाह से गुजरती नाव हिमालय के 'हेमकूट' पर्वत शिखर के पास रुकी। इस शिखर को स्थानीय भाषा में आज 'हामटा जोत' कहते हैं। एक प्रसंग में इस क्षेत्र को हिमालय के पश्चिमीय का 'ढालू प्रदेश' भी कहा गया है। आज मनाली में मनु महाराज का प्राचीन मन्दिर है। कहा जाता है कि इस मन्दिर में स्थापित मूर्ति गांव के बीच में घर की पशुशाला में मिली थी। यह स्थान अब 'पुरानी मनाली' कहलाता है। अथर्ववेद में उल्लेख है कि हिमवत पर्वत के जिस शिखर के पास नाव उतारी गयी थी, वहां अमृत तुल्य 'कुठ' नामक औषधि उत्पन्न होती है।

मनाली के समीप ही ऊंचाई पर यह 'हेमकूट' अथवा 'हामटा' नामक पर्वत जोत है, जो 'हिमवत' से 'हेमकूट' और फिर से बिगड़कर स्थानीय भाषा में हामटा बना हुआ माना जाता है। कहते हैं आज भी यह स्थान औषधियों के लिए प्रसिद्ध माना जाता है। नीचे दिए गए उपग्रह मानचित्र में मनाली के सामने 'हामटा जोत' दर्शायी गई है –

इस प्रकार मनाली के पास एक स्थान **नाओ-प्नाऊ** अर्थात् **नाओ-पलाओ** भी है, जो वर्ण-लोप नियम के अनुसार 'नाव-पड़ाव' शब्द का विकृत रूप हो सकता है। संभावना यह भी बनती है कि जल-प्रलय के समय यह मनु की नाव का पड़ाव स्थान रहा होगा। ध्यान देने योग्य है कि इस स्थान का नामकरण 'नाव' नाम के शब्द से होना बिल्कुल अंसभव लगता है क्योंकि हिमाचल की उस तलहटी में

तो नाओ-प्लाऊ' अर्थात् 'नाओ-पलाओ' का कोई अर्थ ही नहीं बनता।

एक संदर्भ के अनुसार चाक्षुष मन्वन्तर के अन्त में एक बार मनु आश्रम के समीप एक नदी में अपने पित्रगण के लिए तर्पण कर रहे थे, तो हाथों में एक छोटी सी मछली आई। उसका आकार लगातार बढ़ने पर मनु ने उसे गंगा में प्रक्षिप्त कर दिया। तत्पश्चात् भगवान मतस्य सामने प्रकट हुए और दक्षिण समुद्र में मनु से वार्तालाप हुआ। इससे यह सिद्ध हो जाता है कि यह घटना हिमालय जन्म और गंगा उद्‌गम के बाद की ही होगी।

एक और साक्ष्य के अनुसार जल प्रलय के समय मनु के साथ सप्तऋषि और देवगण भी थे, जिन्होंने सृष्टि निर्माण में मनु का सहयोग किया और इसी स्थान में बस गए। आज इसका प्रमाण यह है कि कुल्लू की इस घाटी में सभी सप्तऋषियों और देवों के सीान है और मन्दिर भी है जिसके कारण सदियों से कुल्लू को 'देव-भूमि' के नाम से जाना जाता है।

एक उल्लेख ऐसा भी आता है कि भारतीय कालगणना के अनुसार छठे (चाक्षुष) मन्वन्तर के अन्तिम चरण में सम्पूर्ण उत्तरी गोलार्ध में हिमयुग आ चुका था और सूर्य की ऊष्मा से पृथ्वी का विशाल जल भण्डार वाष्प बन कर उड़ गया और अन्ततः सारा जल मूसलाधार वर्षा बन कर बरस पड़ा। चालीस दिन-रात वर्षा होने से पृथ्वी पर एक भारी प्रलय आया था। इस तरह पृथ्वी का जल स्तर ५०००-१०००० फुट तक बढ़ गया और अधिकांश जीव-जन्तु और पेड़-पौधे इस जल-प्लावन से नष्ट हो गए। संभवतः ऐसे समय में कोई जीव बचा होगा तो ऊंचा पर्वतों पर चढ़कर ही। विवस्वान (सूर्य) पुत्र सत्यव्रत अर्थात् श्राद्धदेव दक्षिण भारत की प्रतिष्ठान पुरी के राजा ने नदी में तर्पण करते समय एक मछली की सलाह से एक विशाल नौका बनाकर कुछ लोगों की प्राण रक्षा हिमालय की तलहटी पर पहुंचाकर की। कई वर्षों बाद जब जल घटा तो जीव-जन्तु पुनः मैदानों में उतरने लगे और जीवन पूर्ववत फलने-फूलने लगा।

एक अन्य संदर्भ के अनुसार, 'जब हिमालय की उपत्यका' में स्थित भू-भाग से दक्षिण पठार का सम्बन्ध स्थापित हो रहा था और उस पठार की नैरित्य दिशा वाली भूमि जलमग्न हो कर इसके आगे वाले भू-खण्ड से अर्थात् अफ्रीका से भारत का पुराना सम्बन्ध टूटता जा रहा था। (महाद्वीपीय चलन/कॉन्टिनेंटल ड्रिफ्ट) उस समय दक्षिण में समुद्र की ओर रहने वाली मुनष्यों की मच्छ प्रजातियां, जो कुशल तैराक थी, उत्तर की ओर भागने लगी। ये लोग मानव तो थे ही परन्तु जल सम्बन्धी उनके

अनुभव करिश्माई थे। कहते हैं मनु को आगामी जलजले की सूचना भी इन्हीं लोगों ने दी थी और इससे उबरने में सहायता भी इन्होंने ही की थी इसे मत्स्यावतार की कथा से भी जोड़ा जा सकता है। यह विवरण काल्पनिक न होकर व्यावहारिक लगता है।

एक अन्य उल्लेख के अनुसार चाक्षुष मन्वन्तर के अन्त में पृथ्वी पर भारी जलप्लावन हुआ तो क्षीर सागर में पृथ्वी के टुकड़े तैरने लगे। श्वेत हिमखण्ड के बहुत से द्वीप समुद्र में तैरने लगे थे तो मनु गीले वस्त्र और जटा धारण किए नदी के तट पर तपस्या कर रहे थे कि एक मत्स्य जलपोत आकर रूका और उसने मनु को आगामी खतरा बताकर सप्तऋषियों व समस्त पदार्थों के बीजों को लेकर निकल जाने को कहा। दक्षिण समुद्र में वार्तालाप करने के बाद प्रलय-काल में वर्षों तक जल में तैरते हुए नर्मदा नदी के सहारे विन्ध्याचल पार करते हुए मनु को उत्तर में हिमालय की चोटी दिखी और मनु ने नौका को वहां पहुंचाकर अपना आश्रम बनाया।

एक और संदर्भ के अनुसार उत्तर कुरू के आगे वाले समुद्र से तैरता हुआ देवलोक से ही यहां आकर मनु ने व्यास की उपत्यका में अपना आश्रम बनाया। उस समय ऋषियों और देवताओं ने भी उसके परामर्श से अपने आश्रम कुल्लू-कुलान्त पीठ के विभिन्न स्थानों में बनाए।

इस प्रकार सभी उल्लेख आपस में एक कुछ हद तक अच्छा-खासा मेल तो खाते ही हैं, लेकिन आपसी विरोधाभास होने से यह तो स्पष्ट भी नहीं हो पाता, कि यह घटना सत्य थी और किस भूगर्भीय काल-खण्ड में घटी। लेकिन यदि सारे उल्लेखों को एक साथ रख कर दिया जाए तो दो तथ्य एकदम स्पष्ट दृष्टिगोचर हो जाते हैं कि यदि यह घटना घटी है तो (१) पृथ्वी पर जलप्लावन काल खण्ड की है और (२) हिमालय के क्षेत्र में ही घटी है।

भूगर्भीय साक्ष्य

भूगर्भ विज्ञान के अनुसार पृथ्वी पर जल-प्लावन का होना एक प्राकृतिक घटना है, क्योंकि प्रमाण है कि समय-समय में कई हिमयुग और जल-प्लावन हुए हैं। अभी तक कम से कम ५ बड़े हिमयुग हुए है, जिनके नाम इस प्रकार से हैं १. हुरोनियन, २. क्रयोगेनियन, ३. अन्देअरसहरान ४. कारोस हिमयुग ५. क्वाटरनरी ग्लासिएसन और संभवतः प्रत्येक हिमयुग के बाद जलप्लावन भी हुए हैं।

नीचे दी गयी तालिका में भारतीय काल-गणना और विज्ञान के कालखंडों को एक साथ मिलान करने का प्रयास किया गया है –

भारतीय कालगणना के अनुसार	आधुनिक विज्ञान के अनुसार	
	Era	
५०००० हजार वर्ष पूर्व भारत में हिमयुग??		आजकल भी अन्तर हिमयुग चल रहा है, अन्तिम अन्तर हिमयुग १०००० वर्ष पूर्व तक रहा।
मनु मनाली काल त्रैतायुग : ६-२२ लाख वर्ष पूर्व २८वां महायुग : सतयुग : ३६ लाख वर्ष पूर्व	Cenozoic (आज से ६.५ करोड़ वर्ष पूर्व तक)	**दीर्घ जल-प्लावन :** १७.२८ लाख वर्ष पूर्व, आधुनिक मानव : १८ लाख वर्ष पूर्व (एशियाई लोग अमेरिका में बसे) अन्तिम हिमयुग २५.८ लाख वर्ष पूर्व से १८ लाख वर्ष पूर्व
		हिमयुग : १.५ करोड़ वर्ष पूर्व??
		हिमालय जन्म : ५ करोड़ वर्ष पूर्व
नई सृष्टि : सातवें वैवस्वत मनुः वैवस्वत मन्वन्तर शुरू १२ करोड़ वर्ष पूर्व। अभी तक कुल छः मन्वन्तर हो चुके हैं।	Mesozoic (६.५ करोड़ से २४.५ करोड़ पूर्व तक)	जल-प्लावन के प्रमाण? क्रिटेशस युगः १३.५ करोड़, डायनासुर नष्ट हुएः ६.५ करोड़ वर्ष पूर्वः तत्पश्चात् टर्शियरी इरा शुरू
एक द्वीपा पृथ्वी : १.९७ अरब वर्ष, चतुर्महद्विपाः १.२५ अरब वर्ष, (कुरुक्षेत्र प्रदर्शनी चित्रः ३०-२० करोड़, १८ करोड़ वर्ष पूर्वः एकद्वीपा पृथ्वी टूटी) ऋग्वेद के अनुसार एक द्वीपा पृथ्वीः ५४ करोड़ वर्ष पूर्व।	Palaeozoic (२४.५ करोड़ से ५४.२ करोड़ पूर्व तक)	चौथा हिमयुग : ३६-२६ करोड़ वर्ष पूर्व, जुरासिकः १९.५ करोड़ (२५ करोड़??), जल प्लावप???, एकद्वीप (पेंजेया) : ३०-२० करोड़, १८ करोड़ वर्ष : पेंजेया द्वीप टुटा : पक्षीः, १४.५ करोड़ वर्ष पूर्व : तीसरा हिमयुग : ४६-४२ करोड़ वर्ष पूर्व : प्री-पेंजेया फॉर्म्स : डेवोनियन : ३६ करोड़ः, मछली (४२.६ करोड़) कैम्ब्रियन इरा : ५४ करोड़ वर्ष पूर्व :
श्वेत वराह कल्प : पहला दिनः १.९७ अरब वर्ष (१९७ करोड़) अभी तक कुल पांच मन्वन्तर हो चुके हैं। प्रथम मनु मेरू प्रदेश में रहते थे।	Precambrian Proterozoic (542 Mya-2.5 Bya)	दूसरा हिमयुग : ८५-६३ करोड़ वर्ष (१०००० फुट बर्फ) पहला हिमयुग : २.४-२.१ अरब वर्ष फिर जल-प्लावन

पृथ्वी की उत्पति : ४.३२ अरब वर्ष पूर्व	Archean (2.5-3.8) bya Hadean (3.8-4.5) Bya	पृथ्वी की उत्पत्ति : ४.६ अरब वर्ष पूर्व (से ५४ करोड़ वर्ष पूर्व तक कोई जीवन नहीं)

विज्ञान के अनुसार पृथ्वी की आयु ४.५ अरब वर्ष है, लेकिन पृथ्वी पर जीवन लगभग ३.८ अरब वर्ष पूर्व बैक्टीरिया/ अलगी (शैवाल) के रूप में शुरू हुआ और उधर शास्त्रों में श्वेतवारह कल्प के लगभग १ अरब ६७ करोड़ वर्ष बीत चुके हैं, और कल्प का पहला मन्वन्तर 'स्वयम्भू' शुरू होने तक पृथ्वी पर कोई जीवन नहीं था। यह काल विज्ञान की पेलियो-प्रोटोजोयिक इरा के आस-पास बैठता है। स्वारोचिष, उत्तमाज के काल में पृथ्वी पर जीवन में अधिक विकास तो नहीं हो पाया, लेकिन प्रकृति के भयंकर थपेड़ों के सहने की शक्ति अवश्य प्राप्त हुई। ऋग्वेद के श्लोक २.१२.२ के अनुसार तमस और रैवत के काल में लावा ठण्डा होने के बाद ठोस आकार लेने पर पृथ्वी एक द्विपा 'पैन्जीआ' हुई (५४ करोड़/२० करोड़ वर्ष पूर्व??) भारी वर्षा होने पर स्वच्छ पानी की विशाल झीलें, नदियां और समुद्र बने।

यः पृथिवीं व्यथमानामद्दहृद्यः पर्वतान्प्रकुपितांअरम्णात्।

योअन्तरिक्षं विममे वरीयो यो द्यामस्तभ्रात्स जनास इन्द्रः।।

इस काल में पृथ्वी पर जीवन ने बड़ी छलांग लगाई, इसे कैम्ब्रियन इरा भी कहा जाता है। विज्ञान के अनुसार रैवत काल (६०-४० करोड़ वर्ष पूर्व) में विकसित जल प्राणी पैदा हो चुके माने जाते हैं। पृथ्वी के आन्तरिक दबाव बढ़ जाने से एकद्वीपा पृथ्वी दो भागों 'गोंडवाना' और 'लौरेशिया' में टूटी और विशाल नदियों तथा समुद्रों का निर्माण हुआ। छठा चाक्षुष मन्तन्तर (४०-१२ करोड़ वर्ष पूर्व) के दौरान विभिन्न प्रकार के जल-प्राणी की नस्लें तैयार हुई और धरती पर वनस्पति, सरिसृप, डायनासुर और पक्षियों का राज था। वैज्ञानिकों के अनुसार इस काल में पृथ्वी पर भारी ज्वालामुखी क्रियाशीलता मानी जाती है। आन्तरिक दबाव और अधिक बढ़ जाने से पृथ्वी का टुकड़ा 'गोंडवाना' टूटा और पांच बड़े भागों में बिखरा, जिसमें एक भारतीय उपमहाद्वीप का टुकड़ा भी था।

महाद्वीपीय चलन/कॉन्टिनेंटल ड्रिफ्ट का वर्णन शास्त्रीय संदर्भ में होना एक महत्वपूर्ण तथ्य है जिसमें अफ्रीका से भारत का पुराना सम्बन्ध टूटता जाता है और भारत भू-खण्ड उत्तर की ओर बढ़ता बताया गया है। नीचे दिया गया भूगर्भीय/भोगौलिक मानचित्र लगभग एक वर्णित भूगर्भीय और भोगौलिक स्थिति को प्रदर्शित करता है, लेकिन इसका काल-खण्ड लगभग ६.५ करोड़ वर्ष पूर्व है, जबकि शास्त्रीय घटना १२ करोड़ वर्ष (वैवस्तव मन्वन्तर) की मानी जाती है। इसके अतिरिक्त घटना में वर्णित हिमयुग और वर्षा से जलस्तर का बढ़ना भी एक प्रश्न और खड़ा हो जाता है।

आजकल चल रहा वैवस्वत मन्वन्तर लगभग १२ करोड़ वर्ष पूर्व शुरू हुआ, वैज्ञानिकों के

अनुसार इस काल में पृथ्वी पर भारी ज्वालामुखी क्रियाशीलता मानी जाती है। भू-गर्भ विज्ञान के अनुसार भारत भू-भाग दक्षिण से भूमध्य रेखा पार कर उत्तर की और बढ़ा और ५-३ करोड़ वर्ष के आस-पास हिमालय पर्वत श्रृंखलाएं उत्पन्न/उठ खड़ी हुई जो कि आजकल लगभग ४५ मिली मीटर प्रति वर्ष की ऊंचाई में बढ़ रही मानी जाती है। शास्त्रों में इस प्रसंग के साथ हिमालय की चर्चा कई बार आती है, हिमालय को मनु स्मृति (२-२१,२२) में 'हिमवद' नाम से पुकारा गया है।

हिमवद-विन्ध्ययोर मध्यं यत् प्राग् विनशनादपि।
प्रत्यगेव प्रयागाच्चं मध्यदेशः प्रकीर्तितः।।२१।।
आ समुद्रात तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात्।
तयोरेवान्तरं गिर्योरार्यावर्तं विदुर बुधाः।।२२।।

इस श्लोक में मध्य देश की भोगौलिक स्थिति दर्शाते हुए, हिमालय और विन्ध्याचल पर्वत का नाम आया है।

ऋग्वेद के नदी सूक्त में सिन्धु, विपाशा, शतदु, वितस्ता (जेहलम), असिक्नी (चिनाब), पुरुशनी (रावि) और सरस्वती के अतिरिक्त गंगा और यमुना के नाम भी आते हैं। गंगा और यमुना नदियां कुछ ही दूर समुद्र में मिल जाती है, ऐसा वर्णन आता है जो कि यहां सिद्ध करता है कि हिमालय की तलहटी से समुद्र अधिक दूर नहीं था और जल प्लावन के समय समुद्र का जल-स्तर बढ़ने पर मनाली तक पहुंच गया होगा। समुद्रतल से मनाली की आज ऊंचाई लगभग २१०० मीटर है और हामटा जोत लगभग ४२६८ मीटर है। वैज्ञानिक प्रमाणों के अनुसार निश्चित ही इनकी ऊंचाई उस काल-खण्ड में बहुत कम रही होगी क्योंकि उस समय से हिमालय में नयी पहाड़ियां पैदा होती रही और लगातार उनकी ऊंचाई भी बढ़ रही है। भू-गर्भ विज्ञानी मानते हैं कि मनाली की चट्टानें बेसमेंट रॉक कहलाई जाती है जो यह भी सिद्ध करता है कि यह स्थान कभी समुद्र के नीचे रहा होगा। अतः हिमालय के उभरने की प्रक्रिया में मनाली स्थान ऊपर और कुछ समय के पास ही रहा तो फिर जल-प्लावन के समय मनु की नाव वाली घटना घटी ।

विज्ञान के अनुसार अन्तिम हिमयुग २५ लाख वर्ष पूर्व से १८ लाख वर्ष पूर्व (चित्र) तक जिसे 'प्लेइस्टोसीन' कालखण्ड कहते हैं।

इस तरह हिमयुग बदलते-बदलते लगभग १७ लाख वर्ष पूर्व पृथ्वी पर दीर्घ जल-प्लावन हुआ। इस समय की एक और स्वभाविक घटना भी सामने आती है कि आधुनिक मानव लगभग १८ लाख वर्ष पूर्व में लोग एशियाई भूखण्ड से अमेरिका में जाकर बसे। हिमयुग फिर जल-प्लावन और फिर एशिया से मानव का दूसरे भू-खण्डों में जाने वाली स्थिति वही लगती है कि शास्त्रों में वैवस्वत मनु के काल में हुए जल-प्लावन और फिर नाव द्वारा मनाली भू-खण्ड रुकना और वहां से सम्पूर्ण सृष्टि में साम्राज्य फैलाना। इसमें सब ठीक-ठाक मेल हो रहा है लेकिन एक विरोधाभास है तो मात्र काल-खण्ड का। शास्त्रों के अनुसार यह समय चाक्षुष मन्वन्तर के अन्तिम चरण और वैवस्वत मन्वन्तर की शुरुआत का बनता है जो कि लगभग १२ करोड़ वर्ष (प्रथम महायुग का सतयुग काल) है, जबकि

भूगर्भ विज्ञान के अनुसार यह काल अन्तिम हिमयुग और दीर्घ जल-प्लावन १७-१८ लाख वर्ष (त्रेतायुग काल) के आस-पास बैठता है। यहां एक और अनुकूल स्थिति बनती है कि उस समय हिमालय पर्वत अधिक नहीं उठा था और मनाली के आगे/दक्षिण वाली धरती कम पहाड़ी और अधिक समतल था। जिससे जल-प्लावन का प्रभाव मनाली को छूता हुआ उतर की ओर बढ़ा था।

सारांश एवं निष्कर्ष

पृथ्वी के इतिहास में हुई विभिन्न घटनाओं में जल-प्लावन के समय मनु की नाव का मनाली में रुकना एक बहुत बड़ी घटना है। यह घटना शास्त्रों के अनेकों संदर्भों में अलग-अलग तरह से वर्णित है। इस घटना का वैज्ञानिक युग में सत्यापन कार्य करना इस शोध पत्र का मुख्य लक्ष्य था। इस बारे में सभी प्राचीन शास्त्रीय उल्लेखों, लोक-कथाओं, लोक-गाथाओं और वैज्ञानिक साक्ष्यों को एक साथ रखकर यह निष्कर्ष निकलता है कि घटना सत्य है और हिमालय जन्म और गंगा उद्गम के बाद ही घटी है। अतः ५ करोड़ वर्ष के बाद की ही है, यहां तक कि ३ करोड़ वर्ष के बाद भी हो सकती है, क्योंकि विज्ञान के कुछ साक्ष्यों के अनुसार हिमालय जन्म ३ करोड़ वर्ष पूर्व के आस-पास बैठता है। इस प्रकार यह घटना चाक्षुष मन्वन्तर के अन्त (१२ करोड़ वर्ष पूर्व) और वैवस्वत मन्वन्तर के शुरू होने तक के आस-पास नहीं बैठती या तो फिर वैवस्वत मन्वन्तर के शुरू होने का काल ३ करोड़ वर्ष के बाद का हो।

अब यह प्रश्न पुनः उठता है कि घटना यदि बाद की है तो कितने समय बाद की है? भूगर्भ विज्ञान के अनुसार उस समय के बाद भी प्रकृति में कई तरह के बदलाव हुए और प्रलय आए। जबकि शास्त्रीय मान्यता के अनुसार कई महायुग (सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग) हो चुके हैं और आज तक कुल २७ महायुग बीत चुके हैं। क्योंकि मनुष्य की प्रकृति है कि उसे काल के अन्तराल में घटित अन्तिम घटना का स्मरण अधिक रहता है, अतः अब यह निष्कर्ष बनता है कि प्रलय घटना वैवस्वत मन्वन्तर के वर्तमान में चल रहे २८वें महायुग के सतयुग की हो सकती है, जिसका कालखण्ड लगभग ३9 वर्ष पहले शुरू हुआ। यह केवल संयोग मात्र नहीं कि विज्ञान के अनुसार धरती पर पहला मनुष्य (होमिनिड्स) भी लगभग ४० लाख वर्ष पूर्व हुआ है, जो कि इस विशेष घटना से कहीं न कहीं जुड़ता है।

इस वर्ष में यदि घटना को अन्तिम हिमयुग और जल-प्लावन के साथ जोड़े, तो कालखण्ड १८-१७ लाख के आस-पास बैठता है। विज्ञान के अनुसार यह समय आधुनिक मानव का एशिया से पृथ्वी के दूसरे भागों जैसे, अमेरिका में बसने का भी बताया जाता है। लेकिन भारतीय काल गणना के अनुसार यह त्रेता युग का काल है।

अतः अभी तक यह निष्कर्ष बनता है कि निश्चित रूप से नाव के टकराने की घटना हिमालय जन्म के बाद की ही है और २८वें महायुग के सतयुग के अन्त और त्रेतायुग की शुरू के समय की है, जिसका कालखण्ड लगभग १७-१८ लाख वर्ष बैठता है। हालांकि काल-खण्ड और पीछे जा सकता है,

लेकिन अभी पर्याप्त सबूत उपलब्ध न होने के कारण हमें यही संतोष करना होगा। यदि इस कालखण्ड को ही मान लें तो वैज्ञानिक आधार पर भारतीय इतिहास कम से कम १७ लाख वर्ष पूर्व तक जाता है, जो कि सम्पूर्ण विश्व के इतिहास को पुनः लिखने के लिए विवश करता है।

भविष्य में शोध की संभावना

इस शोध पत्र में दी गई तालिका में कई जगह प्रश्नवाचक चिन्ह लगाये गए हैं, जो उस विषय की अनिश्चिता को इंगित करते हैं। इस तरह इस प्रयास में कुछ विषयों को बहस के लिए और आगे शोध कार्य के लिए खोल दिया गया है –

१. शास्त्र के अनुसार पृथ्वी पर मानव जीवन की शुरुआत १६७ करोड़ वर्ष मानी जाती है लेकिन विज्ञान के अनुसार पृथ्वी पर पहला मानव (होमिनिडस) ४० लाख वर्ष पूर्व हुआ माना जाता है। पृथ्वी पर जीवन की शुरुआत में शास्त्र और विज्ञान दोनों पक्षों के अनुमान में भारी अन्तर है।

२. शास्त्रों के अनुसार चाक्षुष मन्वन्तर के अन्त काल-खण्ड (१२ करोड़ वर्ष पूर्व) में भूगर्भ विज्ञान के अनुसार जल-प्लावन के प्रमाण अभी नहीं है। अतः शास्त्रों के कई संदर्भों में यह मनु की नाव और मनाली की घटना चाक्षुष मन्वन्तर के अन्त और वैवस्वत मन्वन्तर के शुरू की बताई गई है, जिसकी भूगर्भ विज्ञान अभी तक पुष्टि नहीं करता।

३. यदि इसको एक जगह बिठाना है तो वैवस्वत मन्वन्तर के शुरू होने का काल १२ करोड़ वर्ष पूर्व से नीचे उतारकर ३-५ करोड़ वर्ष पूर्व के आसपास लाना होगा या विज्ञान द्वारा दिए गए काल को कम से कम ७ करोड़ वर्ष पीछे ले जाना होगा। क्या ऐसा संभव है?

४. मनाली और कुल्लू क्षेत्र में जल-प्लावन के अवशेष ढूंढना और उसकी डेटिंग करना एक महत्वपूर्ण कार्य अभी शेष हो सकता है।

५. शास्त्रों के अनुसार मनु की मनाली वाली घटना हिमालय और गंगा जन्म के बाद की ही है। अतः यदि हम शास्त्रों के कथन को सही मानें तो भूगर्भ विज्ञान की गणना में हिमालय और गंगा जन्म को कम से कम १२ करोड़ वर्ष के आस-पास ले जाना होगा और इसी तरह हिमयुग और जल-प्लावन का कालखण्ड भी आस-पास रखना होगा।

६. भूगर्भ विज्ञान के अनुसार हिमालय जन्म के काल-खण्ड में ६ करोड़ वर्ष से लेकर ३ करोड़ तक की अनिश्चितता है, जो कि ५०% की त्रुटि है। इस तरह की हिमालय जन्म की अनिश्चितता और त्रुटियां हिमयुग एवं जल-प्लावन के काल-खण्डों में भी देखी जा सकती है जो कि भारतीय कालगणना के सिद्धान्त के लिए एक सकारात्मक संकेत हो सकता है।

अतः एक ओर विज्ञान की अपनी सीमाएं है जो कि भूगर्भीय तथ्यों जैसे रॉक-डेटिंग, जिवान्शय-डेटिंग, इत्यादि को भी अपना आधार मानकर चलता है, जिसमें काल निर्धारण तो होगा लेकिन त्रुटियों से पीछा छुड़ाना अभी कठिन है। इस के अतिरिक्त यह मानता है कि यदि घटना के सबूत नहीं है तो घटना घटी ही नहीं। दूसरी ओर प्राचीन भारतीय ग्रन्थ जो कि खगोलीय गणनाओं के

आधार पर घटना का विवरण कथा स्वरूप में वर्णन करते हैं। उसमें जो कह दिया या लिख दिया वो ब्रह्म-वाक्य मानकर ही चलना होता है। इन दोनों में तालमेल बिठाना ही एक यक्ष प्रश्न को हल करने के समान है। लेकिन यदि शोध कार्यों के चलते सबूत और मिलते रहे और विज्ञान के तरीकों में सृव्यतता आ जाए, तो मन्त्र दृष्टा ऋषियों द्वारा दी गई काल-गणना को वैज्ञानिक सत्यापन देने का कार्य और आसान हो सकता है।

इस प्रकार विज्ञान, इतिहास और संस्कृत के विद्वान एक साथ मिल कर शोध करें तो निश्चित ही शास्त्रों में छिपे इस प्रकार के अनगिनित रहस्यों से पर्दा उठ पायेगा।

संदर्भ :

१. 'अर्थ : द मेकिंग ऑफ प्लेनेट' डॉकुमेंट्री, नेशनल जियोग्राफिक चैनल, यू-टयूब।

२. इन्द्र विजय : ग्रन्थ पं. मधुसदन ओझा शोध प्रकोष्ठ १९९७,

३. मनुस्मृति : ग्रन्थ, शिवराज आचार्य : चौखम्बा विद्याभंवन प्रकाशन, २०१०

४. वैवस्वत मन्वन्तर में मानव सृष्टि तथा समाज रचना, संपादक विद्याचन्द ठाकुर, भारतीय इतिहास संकलन योजना समिति, नई दिल्ली २००७

५. लोक परम्परा में सृष्टि आख्यान, संपादक विद्याचन्द ठाकुर, ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान नेरी, २०१५

६. सृष्टि का इतिहास, डॉ. दामोदर झा, अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना, नई दिल्ली २००६

७. इंडियन टाइम रेकनिंग इन ब्रॉडर परस्पेक्टिव, डॉ. विजय मोहन कुमार पुरी, भारतीय इतिहा संकलन योजना समिति, हिमाचल प्रदेश, २००६

८. फंडामेंटल्स ऑफ हिस्टोरिकल जियोलॉजी एंड स्ट्राटीग्राफी ऑफ इंडिया, रविन्दर कुमार, न्यू ऐज इन्टरनेशनल प्रकाशक, १९९८

९. गूगल मैप्स, गूगल सर्च इंजन। (सभी चित्र)

१०. तलत अहमद, जिओलोजी ६३, १४२ (२०११),

११. एम एन सक्सेना, खण्ड ३७ ए, नं. १,१९७०

भौतिक शास्त्र विभाग, केन्द्रीय विश्वविद्यालय
धर्मशाला, जिला कांगड़ा (हि.प्र.)

अटल जी की जीवन यात्रा

डॉ. इन्द्र सिंह ठाकुर

अटल जी का जन्म ग्वालियर की शिंदे की बस्ती में कलियुगाब्द ५०२६, विक्रमी संवत् १९८१ (२५ मई, १९२४ ई.) को ब्रह्म मुहूर्त में हुआ था। विद्यालय प्रमाण-पत्र उनका जन्म दो साल बाद १९२६ ई. बताता है। प्राची की अरूणिमा हल्का सिन्दूरी रंग बिखेर रही थी। भिनसारे चिरैयां चहक रही थी। अचानक पं. कृष्ण बिहारी वाजपेयी के घर के अन्दर से फूल की थाली बजने लगी। पड़ोसी जान गए कि पं. कृष्ण बिहारी के घर पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई है। भाई-बन्धु, नाते रिश्तेदार और पड़ोसियों को निमन्त्रण दिया गया। अच्छी-खासी भीड़ जमा हुई थी। महिलाएं मंगलगीत गा रही थीं। द्वार पर बधावा बज रहा था, शिशु की चंचलता, कटोरे जैसे नैत्र, गदबदा शरीर और सम्मोहन छटा सबको अपने वश में कर लेती थी। शिशु बढ़ने लगा, बैंया-बैयां आंगन में चलने लगा, मैया दोड़कर पकड़ने लगती। झिंगुला पहनकर, काजल लगाकर, शीश के झबुले केशों को संवारकर हर मां यह अभिलाषा करती है कि मेरा नाम करेगा जग में रोशन मेरा राजदुलारा और मां की यह अभिलाषा पूरी हुई जब पुत्र देश का प्रधानमन्त्री बना। शीशु का नाम बाबा श्यामलाल वाजपेयी ने रखा अटल बिहारी। माता-पिता, भाई-बहन सभी शिशु को अटल कहकर पुकारने लगे। कौन जानता था, यह शिशु संघर्षों के महानद तैरकर, राष्ट्र के लिए अपने जीवन का क्षण-क्षण और शरीर का कण-कण समर्पित कर एक दिन भारत का प्रधानमन्त्री बनेगा।[१]

पं. कृष्ण बिहारी के चार पुत्र अवध बिहारी, सदा बिहारी, प्रेम बिहारी, अटल बिहारी तथा तीन पुत्रियां बिमला, कमला और उर्मिला हुई। परिवार भरा-पूरा था। परिवार का विशुद्ध भारतीय वातावरण अटल जी की रग-रग में बचपन से ही रचने-बसने लगा। यही कारण है कि आज भी अटल बिहारी वाजपेयी भारत की जनता के हृदय के सम्राट हैं। उनके प्रति जनमानस में अटूट श्रद्धा का पारावार उफनता रहता है। आज दिवंगत होकर भी उनकी लोकप्रियता का ग्राफ सदैव ही ऊपर बढ़ता आया है। अटल जी के निधन पर शोक व्यक्त करते हुए कांग्रेस नेता गुलाम नबी आजाद ने कहा, ''अटल जी जीवित रहकर तो हमें जोड़ते ही थे पर उनकी मृत्यु ने भी हमें जोड़ा है।'' वे मात्र एक पार्टी के नेता नहीं बल्कि सम्पूर्ण राष्ट्र के राजनेता थे और सर्वमान्य भारतरत्न हैं। अटल बिहारी वाजपेयी की शिक्षा दीक्षा अपने भाई-बहनों सहित शिन्दे की बस्ती में ही हुई। अटल जी आजीवन अविवाहित रहे। जब-जब माता-पिता ने शादी की चर्चा चलाई, तभी साफ इन्कार कर देते थे। उनकी भाभी बताती हैं कि अनके रिश्तेदारों ने उनको घेरा, पर वे किसी के घेरे में न घिरे। अटल जी ने कई बार स्पष्ट कहा, **मैंने अपना जीवन भारत माता की सेवा में अर्पित कर दिया है और अब सोचने का प्रश्न ही नहीं है।** ग्वालियर

के विक्टोरिया कालेज से हिन्दी, संस्कृत, राजनीति विज्ञान और सामान्य अंग्रेजी, इन विषयों को लेकर उच्च श्रेणी में बी.ए. पास करने वाले विद्यार्थी अटल बिहारी वाजपेयी की तीव्र इच्छा राजनीति विज्ञान और कानून की शिक्षा प्राप्त करने की थी। लेकिन विक्टोरिया कॉलेज में एम.ए. और एल.एल.बी. दोनों एक साथ करना संभव नहीं था। इसलिए उन्होंने कानपुर जाकर अध्ययन करने का निश्चय किया।

अटल जी के पिता कृष्ण बिहारी सेवानिवृत हो चुके थे। विद्याव्यसनी होने के कारण उन्होंने भी कानून की पढ़ाई करने का निश्चय किया और कानपुर आ गए। जब अटल जी और उनके पिता जी आचार्य कालका प्रसाद भटनागर के कमरे में गए तो भटनागर जी ने समझा कि ये महाशय अपने पुत्र के प्रवेश के लिए आए हैं।[१] किन्तु जब उन्हें पता चला कि स्वयं अपने प्रवेश के लिए आये हैं तो आश्चर्य चकित होकर ठहाका लगाकर हंस पड़े और बोले..... आपने तो कमाल कर दिया। छात्रावास में जहां पिता-पुत्र एक साथ एक ही कमरे में रहते थे, झुण्ड के झुण्ड विद्यार्थी इस सहपाठी पिता-पुत्र की जोड़ी को देखने के लिए आते थे। अटल जी और उनके पिता जी कानून की कक्षा एक ही सैक्शन में करते थे, किन्तु बाद में सैक्शन बदला गया। हुआ यह कि जब कभी पिता जी कक्षा में देर से आते तो प्रोफेसर ठहाकों के बीच अटल जी से पूछते.. कहिए, आपके पिता कहां गायब हैं? और जब कभी अटल जी देर से आते तो पिता जी को जबाब तलब किया जाता .... बाजपेयी जी आपके साहिबजादे कहां है? इससे ऊबकर दोनों ने अलग-अलग सैक्शन में बदली करा ली।

प्रथम श्रेणी में एम.ए. करने के बाद वे कानून का अध्ययन पूरा किए बिना ही राष्ट्र की पुकार पर देश सेवा के लिए निकल पड़े। तब से अन्तिम सांस तक अहर्निश राष्ट्र सेवा में ही लगे रहे। भारत माता को अपने इस पुत्र पर गर्व होगा।

शाखा और कविता प्रेम

पढ़ाई के अतिरिक्त अटल जी अपना सर्वाधिक समय संघ के कार्यों में लगाते थे। वे संघ के कार्यों में बहुत सक्रिय रहते थे। वे अन्य छात्रों को भी शाखा में चलने के लिए प्रेरित करते थे, उन्हें संघ की राष्ट्रीयता की भावना समझाते थे, बहस भी करते थे। उनके मित्र राम मोहन बताते हैं कि बहस में तो उनसे कोई जीत ही नहीं सकता था। और इस प्रकार लोगों में वे संघ-प्रेम उत्पन्न कर देते थे। संघ के कार्यों के लिए तो वे दीवाने रहते थे। नगर में कहीं कोई भी कार्यक्रम हो, वे साईकल से या पैदल वहां समय से पहुंचते थे। समय की पाबंदी तो उनका स्वभाव बन गयी थी। इन कार्यक्रमों के कारण वे खाना-पीना सब भूल जाते थे। उनका यह संघ प्रेम रोम-रोम में ऐसा रच-बस गया था कि वह उसी के हो गए और आज भी उसी के हैं। वह जब कार्यक्रमों में जाते थे तो उनसे यह कविता जरूर सुनी जाती थी –

मैं शंकर का वह क्रोधानल, कर सकता जगती क्षार-क्षार
डमरू की वह प्रलय-ध्वनि हूं, जिसमें नाचता भीषण संहार।
रणचंडी की अतृप्त प्यास, मैं दुर्गा का उन्मत्त हास।

मैं यम की प्रलयंकर पुकार, जलते मरघट का धुआंधार।
फिर अन्तर तम की ज्वाला से, जगती में आग लगा दूं मैं।
यदि धधक उठे जल, थल, अम्बर, जड़, चेतन तो कैसा विस्मय,
हिन्दू तन-मन, हिन्दू जीवन, रग-रग हिन्दू मेरा परिचय।[३]

पाञ्चजन्य में भूमिका

राष्ट्रधर्म की अप्रत्याशित सफलता से उत्साहित होकर पं. दीनदयाल उपाध्याय जी ने ''पांचजन्य'' साप्ताहिक प्रकाशित करने का निश्चय किया। उन्होंने राष्ट्रधर्म के सम्पादन का कार्य श्री राजीव लोचन को सौंप दिया और पाञ्चजन्य का सम्पादक अटल जी को बना दिया। पाञ्चजन्य का पहला अंक पौष शुक्ल ३, सं. १६४८ को निकला। इसी बीच महात्मा गांधी की हत्या हो गई, कांग्रेस को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की दिन दूनी रात चौगनी बढ़ोतरी से जलन थी ही, सो उसने अपने माफिक मौका देखकर संघ पर प्रतिबन्ध लगा दिया। देश भर में संघ के लोग गिरफ्तार कर लिए गए। जहां से पाञ्चजन्य प्रकाशित हो रहा था उस भारत प्रेस में सरकार ने ताला लग दिया। श्री दीनदयाल जी, नाना जी आदि जेल में डाल दिए गए। अटल जी भूमिगत हो गए। इसी बीच अटल जी चुपके से इलाहाबाद निकल गए और वहां श्री रामरख सिंह सहगल के अंग्रेजी साप्ताहिक ''क्राइसिस '' में काम करने लगे। सहगल जी कर्मयोगी मासिक भी निकालते थे, अटल जी कुछ समय के लिए उस पत्र के भी सम्पादक रहे।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के ऊपर से प्रतिबन्ध हटते ही दीनदयाल जी जेल से बाहर आ गए, वे सीधे अपनी भारत प्रैस पहुंचे। 'राष्ट्रधर्म' और 'पाञ्जन्य' का प्रकाशन फिर शुरू हो गया। पं. दीनदयाल जी का संदेश पहुंचते ही अटल जी भी लखनऊ वापस आ गए और पांचजन्य का सम्पादन कार्य प्रारम्भ किया। इस पत्र के माध्यम से अटल जी जनता में फैले तमाम विभ्रम को दूर करने में जुट गए।[४] राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की भूमिका को तर्कपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करने वाले अटल जी ने जनमानस को सही सोच ओर दिशा दी। परिणामतः लोग समझ गए कि कांग्रेस का राष्ट्र स्वयंसेवक संघ से विरोध केवल राजनीतिक हितों के कारण ही है। इसी बीच संघ के ऊपर से प्रतिबन्ध हटाने से सम्बन्धित पाञ्चजन्य का एक विशेषांक निकला। इस अंक की तैयारी में अटल जी ने दिन-रात एक कर दिया। न खाने-पीने की चिन्ता, न सोने की सुध केवल अंक की तैयारी।

उन दिनों की बातें संघ के समर्पित स्वयंसेवक श्री राधेश्याम कपूर बताते हैं कि .... मैं राष्ट्रधर्म प्रकाशन का हिसाब-किताब लिखता था। वैसे तो मैं अमीनाबाद में अपनी दुकान पर बैठता था, पर मन राष्ट्रधर्म प्रकाशन में लगता रहता था। उन दिनों राष्ट्रधर्म का कार्य हम लोगों के प्राणों में बसा हुआ था। हम लोगों के सामने अनेक दिक्कतें थीं। अभावों के कारण कभी-कभी **पं. दीनदयाल जी और अटल जी जमीन पर चटाई बिछाकर सिराहने ईंट रखकर सो जाते थे। इतना कहते-कहते उनका गला भर आता है और आंखो से आंसू टपकने लगते हैं। आज कपूर जी इस दुनिया से अलविदा कह गए हैं।**[५]

पाञ्चजन्य स्वर्णजयन्ती के अवसर पर इस पत्र के पहले सम्पादक अटल जी ने वर्ष १६६७ ई. में अपने उद्‌गार इस प्रकार प्रकट किए थे,[६] पाञ्चजन्य अपने प्रकाशन के ४६ वर्ष पूर्ण करके स्वर्ण

जयन्ती वर्ष में प्रविष्ट हो रहा है, यह बड़ी प्रसन्नता की बात है। मुझे उन इने-गिने व्यक्तियों में होने का सौभाग्य प्राप्त है, जो पाञ्चजन्य के प्रसव-वेदना से लेकर उसके प्रकाशन और उसकी उतरोत्तर उन्नति के साक्षी और भागीदार रहे हैं।

आज मुझे पाञ्चजन्य के प्रकाशन के प्रेरणादाता श्री भाऊराव देवरस तथा परामर्शदाता और मार्गदर्शक श्री दीनदयाल उपाध्याय का स्मरण हो रहा है। उनके द्वारा लगाया गया बीज आज अन्य मित्रों की सहायता से एक विशाल वटवृक्ष में परिवर्तित हो चुका है, जिसकी छाया पूरी भारतीय पत्रकारिता को प्रभावित कर रही है। मैं पाञ्चजन्य के सभी संपादकों, प्रबन्धकों, कर्मचारियों, प्रकाशन में लगे सभी मित्रों को बधाई देता हूं। उनका अथक परिश्रम आज रंग लाया है, उसकी साधना सफल हुई है।[७]

भारतीय जनसंघ और अटल

देश में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का विस्तार दिनों- दिन बढ़ता जा रहा था। कांग्रेस की आंख की किरकिरी बनी यह संस्था अपनी विचारधारा के कारण लोगों को आकर्षित कर रही थी। गांधी जी की हत्या के समय कांग्रेस को अच्छा मौका मिल गया और सरकार ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर प्रतिबन्ध लगा दिया।[८]

उस समय राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की बात कहने वाला लोकसभा में कोई भी नहीं था। संघ के वरिष्ठ स्वयंसेवकों में इस विषय को लेकर गहन विचार-विमर्श हुआ। निश्चय हुआ कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ अपना एक राजनीतिक दल खड़ा करें, जो चुनावों से भी भाग ले। अस्तु डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी के नेतृत्त्व में भारतीय जनसंघ नामक एक नया दल बनाया गया। डॉ. मुखर्जी की विद्वता और विधायिकी ज्ञान से पूरा देश परिचित था। अटल जी भारतीय जनसंघ के संस्थापक सदस्य हैं।

२१ अक्तूबर, १९५१ को दिल्ली में भारतीय जनसंघ का पहला अधिवेशन हुआ। वर्ष १९५२ ई. में जो लोकसभा चुनाव हुआ, उस चुनाव में भारतीय जनसंघ के प्रत्याशी खड़े हुए थे। चुनाव के पश्चात् इस दल को एक अधिकृत राजनीतिक दल की मान्यता प्राप्त हुई। जनसंघ ने दीपक को अपना चुनाव चिन्ह बनाया था। जनसंघ ने राष्ट्रवाद, सकारात्मक सेक्यूलरवाद और हिन्दुत्व की भावना को प्रमुखता दी। जनसंघ ने देश के सामने स्पष्ट किया कि हिन्दुत्व एक पंथ विशेष नहीं है, किसी विशेष उपासना पद्धति का द्योतक भी नहीं है। वह तो एक जीवन रचना का परिचायक है, जिसके अन्तर्गत अनेक सम्प्रदाय, मत-मतान्तर तथा उपासन पद्धतियों का समावेश है।

भारतीय जनसंघ ने सभी भारतीयों के लिए अपने द्वार खुले रखे यही कारण है कि उसमें विभिन्न सम्प्रदायों के भारतीय सम्मिलित हुए। अटल जी ने इस बात को सुस्पष्ट करते हुए कहा कि जनसंघ में हिन्दू राष्ट्र का प्रयोग वर्जित नहीं है। हमारे लिए राष्ट्रीयता के संदर्भ में भारतीय और हिन्दू पर्यायवाची शब्द हैं। हमारी मान्यता है कि भारत एक प्राचीन राष्ट्र हैं। हमें किसी नए राष्ट्र का निर्माण नहीं करना है, अपितु इस प्राचीन राष्ट्र को सुदृढ़ समृद्ध और आधुनिक रूप देना है। जनसंघ सेक्युलर का अर्थ धर्मनिरपेक्ष नहीं मानता वह उसका अर्थ सम्प्रदाय निरपेक्ष मानता है। राज्य धर्मसापेक्ष, किन्तु

सम्प्रदाय निरपेक्ष होना चाहिए।

जनसंघ ने इस बात को भी रेखांकित किया है कि हमारा यह आग्रह भी नहीं है कि मुसलमान अपना मजहब छोड़े अथवा हिन्दू देवी-देवताओं को मानें। प्रायः अधिकांश मुसलमानों के पूर्वज हिन्दू ही थे। उनकी धमनियों में हिन्दू रक्त बहता है। मजहब बदलने से पूर्वज नहीं बदलते, न संस्कृति बदलती है।

डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी के नेतृत्व में भारतीय जनसंघ प्रगति के पथ पर अग्रसर हो रहा था। देश की जनता जनसंघ के सिद्धान्तों और नीतियों के कारण उसकी ओर तेजी से अपना रुझान दर्शाने लगी थी। 23 जून, 1943 ई. की वह काली रात जब बड़े रहस्यमय ढंग से उन्हें मृत घोषित कर दिया। अटल जी का मानना है कि वे मरे नहीं, विभाजित भारत की अवशिष्ट एकता को बनायें रखने के लिए राष्ट्र की वेदी पर अपने सर्वस्व की बलि चढ़ाकर अमर हो गए। औरों को बलिदान के पथ पर आने का आह्वान करते-करते स्वयं बलि हो गए। ध्येय की सिद्धि के लिए अपने अनमोल जीवन को न्योछावर कर गए। विघटनकारी मनोवृत्तियों से लोहा लेते हुए वीरगति को प्राप्त हुए। भारत माता के मस्तक को कश्मीर के कीरिट से मण्डित रखने के लिए अपने प्राणों पर खेल गए। अंधकार की शक्तियों से संघर्ष करते-करते अनन्त ज्योति में विलीन हो गए। अपने धर्म का पालन करते हुए कर्मभूमि में सो गए।[६]

अप्रतिम भाषण : अपने ओजस्वी संभाषण कौशल के कारण उत्तर भारत में अटल जी की ख्याति फैल चुकी थी। भारतीय जनसंघ ने उन्हें वर्ष १९५७ में दूसरे लोकसभा चुनावों में मैदान में उतारने का निश्चय कर लिया। उन्हें लखनऊ, मथुरा और बलरामपुर तीन स्थानों से भारतीय जनसंघ ने प्रत्याशी बनाया। चुनाव हुए, लखनऊ और मथुरा से अटल जी पराजित हुए किन्तु बलरामपुर ने उन्हें विजयी बनाकर लोकसभा भेज दिया। १९५७ ई. के लोकसभा चुनावों में अटल जी सहित जनसंघ के तीन और सदस्य जीतकर लोकसभा पहुंचे। अटल जी मानते हैं कि भारतीय जनसंघ के हम चारों सदस्य संसद में पहली बार आए थे। हममें से कोई विधासभा का भी सदस्य नहीं रहा था। विधायी कार्य के लिए सर्वथा नए थे। न कोई पूर्व अनुभव था, न कोई अनुभवी सदस्य सहायता के लिए उपलब्ध था। संख्या कम होने के कारण सभी सदस्यों को सदन में पिछली बैंचों पर स्थान मिले थे। लोकसभा अध्यक्ष की नजर खींचना टेढ़ा काम था। विभिन्न विषयों पर चर्चा में समय पार्टियों के संख्या बल के अनुसार मिलता था। भारतीय जनसंघ के लिए बोलने का समय पाने में बड़ी कठिनाई होती थी। पार्टी के हिस्से में मुश्किल से दो-चार मिनट आते थे। बहस लम्बी खिंच जाती थी। प्रधानमन्त्री द्वारा बहस का उत्तर दिए जाने का समय निश्चित होता। २० अगस्त, १९५८ ई. को प्रधानमन्त्री श्री नेहरू जी ने अटल जी के भाषण सुनने के बाद इस प्रकार कहा कि कल जो बहुत से भाषण हुए उनमें एक भाषण श्री वाजपेयी जी का भी हुआ। अपने भाषण में उन्होंने एक बात कही थी और यह कहा था, मेरे ख्याल में जो हमारी विदेश नीति है, वह उनकी राय में सही है, मैं उनका मशकूर हूं कि उन्होंने यह बात कही। एक बात उन्होंने और कही कि बोलने के लिए वाणी होनी चाहिए, लेकिन चुप रहने के लिए वाणी और विवेक दोनों चाहिए। इस बात पर मैं पूरी तरह सहमत हूं।

तीसरी लोकसभा के लिए अटल जी बलरामपुर से फिर चुनाव लड़े, किन्तु अनेक षड्यन्त्रों के कारण चुनाव न जीत सके। उन दिनों अटल जी जनसंघ के प्रवक्ता थे। अपने भाषणों, विचारों और प्रचार-क्षमता के कारण पार्टी का कद काफी ऊंचा हो गया था। पार्टी की लोकप्रियता को देखकर अन्य राजनीतिक दलों के लोग उनसे ईर्ष्या करने लगे थे। चुनाव की तिथि घोषित होते ही वाम मार्गियों ने संघ के विरुद्ध विष उगलना शुरू कर दिया। वे लोग राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के विरुद्ध निराधार बातें करते थे। वे जनता में प्रचारित करते थे कि संघ फासिस्ट पार्टी है। यह भी कहा गया कि राष्ट्रीय स्वयंसवेक संघ के संस्थापक डॉ. हेडगेवार जर्मनी गए थे और वहां की नाजी पार्टी की तर्ज पर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का संगठन तैयार किया जा रहा है। संघ के विषय में अनेक मनघंडत भ्रामक बातें प्रचारित की जाने लगीं।

ऐसा नहीं कि जनसंघ के कार्यकर्ताओं का प्रचार ढीला हो, या उनके उत्साह में कमी हो या उनका मनोबल गिर गया हो। वे भी जी- जान से जनता को पार्टी की नीतियों को समझाते थे, जनसंपर्क में भी कोई कोताही नहीं थी। फिर भी छल-बल, झूठ फरेब के चलते अटल जी १०५२ मतों से चुनाव हार गए। तीसरी लोकसभा में जनसंघ की शानदार विजय रहीं। दूसरी लोकसभा में उसके चार सदस्य थे, किन्तु तीसरी लोकसभा में चौदह हो गए। लेकिन पं. दीनदयाल उपाध्याय और अटल जी लोकसभा नहीं पहुंच पाए। पार्टी ने निश्चय कर लिया कि राज्यसभा में अटल जी को भेजने की क्षमता अब संघ के पास आ गयी है। अस्तु उन्हें राज्यसभा का प्रतिनिधी बनाया जाए। राज्यसभा के लिए हुए चुनाव में अटल जी विजयी हुए और फिर संसद के उच्च सदन में पहुंच गए। इस विषय में अटल जी ने कहा है :

हमारे दल जनसंघ के सदन में दो ही सदस्य थे। फिर भी सभापित डॉ. राधाकृष्णन ने मुझे प्रथम पंक्ति में स्थान दिया। कोई चर्चा ऐसी नहीं थी, जिसमें पार्टी का दृष्टिकोण रखने का अवसर न मिलता हो। डॉ. राधाकृष्णन बड़ी शालीनता और गरिमा के साथ सदन की कार्यवाही का संचालन और नियन्त्रण करते थे। अटल जी ग्वालियर में पांचवीं लोकसभा के लिए चुनाव मैदान में उतारे गए। ग्वालियर वासी बड़े खुश नजर आ रहे थे कि दुनिया के अनेक देशों में भारत की अस्मिता की पताका फहराने वाले अपने अटल जी अब की बार अपने नगर से चुनाव लड़ेंगे। नामांकन हुआ, चुनाव हुए और कांग्रेस के प्रत्याशी को पराजय का मुंह देखना पड़ा। अटल जी भारी बहुमत से जीत गए। लोकसभा में अपनी जन्मभूमि का प्रतिनिधित्व करने वाले अटल जी अब तक समूचे राष्ट्र में अपना व्यापक जनाधार बना चुके थे। उनकी सभाओं में अपार जनसमूह उमड़ने लगा था। उन्हें नेहरू जी जैसी लोकप्रियता मिल रही थी। संसद में उनके प्रश्नों के उत्तर देने में शासक दल के नेता और मन्त्री बगले झांकने लगते थे।[१०] अटल जी जो कुछ बोलते थे, वह प्रमाणिक होता था। उनकी प्रस्तुति की अनोखी कला पर, उनकी व्यंग्य- विनोदपूर्ण शैली पर, उनके विरोधी भी अन्दर से प्रसन्न, पर बाहर से खीज उठते थे। कड़वी-कड़वी बात वे ऐसे शब्दों में पिरो देते थे कि वह मेथी बन जाती थी, पर असर कड़वा ही रहता था। उस अवधि के उनके संसद के भाषणों के कुछ अंश यहां पाठकों के सामने रखना

उचित समझता हूं।

शिमला समझौतो पर अटल जी के विचार

शिमला समझौते पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए अटल जी ने संसद में कहा था.. हम मैदान में जीते, पर मेज पर हारे। वास्तव में श्री भुट्टो शिमला में अपने तीन उद्देश्य लेकर आये थे अपनी हारी हुए जमीन को वापस लेना, युद्ध बंदियों को छुड़ाना और कश्मीर को विवाद का विषय बनाये रखना। वे अपने पहले उद्देश्य में सफल हो गए तथा युद्ध बंदियों के सम्बन्ध में उन्होंने कहा कि हम विश्व जनमत इक्कठा करेंगे और इसलिए कश्मीर का मामला लटका पड़ा रहेगा। इस शिमला-समझौते के विषय में अटल जी ने दो टूक बातें कहीं थी।[११]

हम पाकिस्तान की एक इंच जमीन नहीं चाहते हैं, मगर पाकिस्तान हमारी 30 हजार वर्गमील जमीन पर कब्जा जमाकर बैठा रहे, ऐसा हो नहीं सकता। शिमला समझौता के कारण कश्मीर की जनता में अनिश्चिता पैदा हो गई है। दो-तीन दिन कश्मीर की जनता में सन्नाटा था। जो भारत के हिमायती थे, उनके हौसलें पस्त थे। तथा अलगाव वादियों के हौंसले बुलन्द थे। मैं जानना चाहता हूं कि, शिमला में कश्मीर के बारे में कोई समझौता हुआ? मुझे दुःख है, कोई गुप्त समझौता हुआ है।

राष्ट्रगीत का आदर आवश्यक

पाकिस्तान के निर्माण के बाद यह आशा की गई थी कि अब भारत में साम्प्रदायिक सद्‌भाव कायम होगा, किन्तु, यह आशा निराशा में बदल गई। उर्दू को राजभाषा बनाने तथा कई स्थानों पर साम्प्रदायिक दंगे होने से देश की रूह कांप उठी। जब मुम्बई में लोगों ने वन्देमातरम का विरोध किया तो सारा देश सन्न रह गया। इसको लेकर अटल जी ने संसद में बड़ी गंभीर और मार्मिक बहस की। उन्होंने कहा... आज मुस्लिम समाज में से एक वर्ग ऐसा क्यों निकल रहा है, जो मुम्बई में खड़े होकर कहता है कि हम वन्देमातरम कहने के लिए तैयार नहीं है। वन्देमातरम इस्लाम का विरोधी नहीं है।[१२] क्या इस्लाम को मानने वाला जब नमाज पढ़ता हैं तो इस देश की धरती पर, इस देश की पाक जमीन पर माथा नहीं टेकते?

माथा जमीन पर टेका जाता है, इस जमीन से पैदा हुआ अन्न हम खाते हैं। यह जमीन आखिरी क्षणों में हमको अपनी बाहों में लेती है। क्या दुनिया के और देशों में राष्ट्रगीत नहीं है।

लोकहित में विश्वास

अटल जी का चिन्तन है कि मनुष्य चेतन जगत का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है। बुद्धि, विवेक, सहानुभूति, दया, क्षमा, प्रेम, औदार्य आदि के कारण ही वह सर्वोत्कृष्ट बन गया है। कवि रूप में अपने अन्तर्मन के भावों को जब काव्य के माध्यम से वे व्यक्त करते हैं तो स्वार्थ - भाव से ऊपर लोकहित की चिन्ता करते हैं। यही लोकहित मंगलम या शिवम कहलाता है। कवि की कविता में सत्यम, शिवं, सुन्दरम् की त्रिवेणी का संगम रहता है, जिसमें मानस-स्नान करके लोक के पात्र अपने प्रदूषित विचारों की कालिमा को धोने का अवसर पाते हैं। सच्चा कवि वन्द्य और प्रक्षमय होता है, क्योंकि वह सब कहीं हित होई भाव से काव्य की सृष्टि करता है। इस भाव में आकर अटल जी कहते है ......

टूटे हुए तारों से फूटे वासंती स्वर,
पत्थर की छाती में उग आया नव अंकुर
झरे सब पीले पात
कोयल की कुहुक रात,
प्राची में अरूणिमा की रेख देख पाता हूं।
गीत नया गाता हूं।[१३]

राष्ट्र के प्रति अटूट श्रद्धा

मां भारती के प्रति अटूट श्रद्धा का भाव रखने वाले अटल जी का मानना है कि भारत एक राष्ट्र है, इसके प्रति अनन्य निष्ठा ही राष्ट्रीयता का निकर्ष होने के कारण भारत के सभी जनों को अपनी निष्ठाओं को इसके अधीन बनाना होगा। इस सच को जानने की आवश्यकता है। तभी तो मनुष्य, मनुष्य की भीड़ से अलग नहीं हो सकता और अकेले में भीड़ से घिरा हुआ अनुभव नहीं कर सकता।

अटल जी उन तत्वों के लिए चेतावनी भी देते हैं जो कहते हैं कि भारतीयकरण देश को विभाजित करने वाला है तो यह सोच त्रुटिपूर्ण है। भारतीयकरण एक नारा नहीं, जीवनदर्शन है। एक प्रतिक्रिया नहीं, ऐतिहासिक प्रक्रिया है। अनादिकाल से भारत अनेक जातियों तथा जीवन प्रवाहों का संगम रहा है। संघर्ष और समन्वय के माध्यम से विभिन्न जातियां भारत में इस तरह से घुलमिल गयी हैं कि इनको आज अलग नहीं किया जा सकता। छोटी सी जलधाराओं को समेटकर, भारत की राष्ट्रीय जीवन धारा अविछिन्न बहती रही है, इसलिए सत्य का संघर्ष हमें सत्ता से लड़ना है। यहां कविमन कह उठाता है —

टूट सकते है मगर झुक नहीं सकते।
सत्य का संघर्ष सत्ता से,
न्याय लड़ता निरंकुशता से,
अंधेरे ने दी चुनौती है,
किरण अन्तिम अस्त होती है।[१४]

सभ्यता कलेवर है, संस्कृति उसका अन्तरंग : अटल जी मानते हैं कि सभ्यता स्थूल होती है, संस्कृति सूक्ष्म। समय के साथ सभ्यता बदलती रहती है, क्योंकि उसका सम्बन्ध भौतिक जीवन से होता है। किन्तु उसकी तुलना में संस्कृति मुख्य रूप से आन्तरिक जगत से जुड़ी होने के कारण अधिक स्थायी होती है। यह सत्य है कि सभ्यता शब्द का एक व्यापक अर्थ में भी प्रयोग किया जाने लगा है। कोई-कोई दार्शनिक और विद्वान सभ्यता के अन्तर्गत समूचे जीवन का, जिसमें संस्कृति भी शामिल है, समावेश करते हैं। किन्तु भारत में हम सभ्यता और संस्कृति में एक मोटा भेद करते आये हैं। सभ्यता दिखाई देती है और संस्कृति अनुभव में आती है।[१५]

अटल जी का मानना है कि कुछ अंशों में यह सही है कि सभ्यता का बाहरी रूप युग के अनुरूप बदलता रहता है। लेकिन संस्कृति अक्षुण्ण रहती है। कोई संस्कृति अक्षुण्ण है या नहीं, इसका निर्धारण इस बात से होगा कि उस संस्कृति के आदर्श क्या हैं और वह संस्कृति किन-किन जीवन

मूल्यों के समुच्चय का नाम है। शान्ति, सहिष्णुता, संयम, क्षमा, दया, प्रेम आदि ऐसे मानवीय मूल्य है, जो परिस्थति-निरपेक्ष हैं और देश काल के अनुसार अपनी सार्थकता नहीं खोते। हम उसी संस्कृति को महान कहते हैं जिसमें इस स्थायी मूल्यों पर अधिक बल दिया जाता है।

इसी विषय को विस्तार देते हुए अटल जी कहते हैं कि मानव-सभ्यता और मानव-संस्कृति एक हैं, किन्तु उनके अलग-अलग स्तर हैं। स्तर के निर्धारण की कसौटियां भिन्न है। प्राचीन भारत में आत्मा के लिए सम्पूर्ण सर्वस्व का त्याग करने का आह्वान किया गया है। इसी का परम सुख कहा जाता था, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि भौतिकता की उपेक्षा की गई थी। केवल किसी संस्कृति का टिका रहना ही काफी नहीं है। वह संस्कृति विकासमान होनी चाहिए, वर्द्धमान होनी चाहिए। भारतीय संस्कृति चिर पुरातन और चिर नूतन है। उसका प्रवाह निरन्तर भी है और चिरंतन भी।

इनका अभिमत यह भी रहा है कि हिन्दू संस्कृति नयी चुनौतियों का सामना करने के लिए तैयार रही है। शंकराचार्य जी का सम्मान करते हुए भी, उनसे मतभेद प्रकट किया जाता रहा है। हरिजनों के मन्दिर-प्रवेश का समर्थन धार्मिक संस्थाए कर रही हैं। कर्मकाण्ड पर अब जोर नहीं हे। किन्तु यह कहना कि कर्मकाण्ड के साथ धर्म भी निष्कासित हो रहा है, यह गलत है। धर्म कैसे निष्कासित हो सकता है? धर्म से हमारी धारणा है। धर्म हमारे अस्तित्व की आश्वस्ति है।

संदर्भ :

१. इन्द्र सिंह ठाकुर, काव्य यात्रा के यायावर : अटल बिहारी वाजपेयी, पृ. ३२
२. वहीं, पृ. ७२
३. वही, पृ. ६६
४. चन्द्रिका प्रसाद शर्मा, (सं) कवि राजनेता : अटल बिहारी वाजपेयी, पृ. ६७
५. वहीं, पृ. ६८
६. वही, पृ. ६८
७. वहीं, पृ. १०७
८. वही, पृ. १०७
९. वही, पृ. १०८
१०. कुछ लेख कुछ भाषण, पृ. २७६
११. संसद में चार दशक, पृ. २६
१२. इन्द्र सिंह ठाकुर, काव्य यात्रा के यायावर : अटल बिहारी वाजपेयी, पृ. ३२
१३. वही, पृ. ५०
१४. वही, पृ. ३६
१५. वही, पृ. ८०

सहायक-आचार्य हिन्दी,
राजकीय महाविद्यालय संजौली,
जिला शिमला (हि.प्र.)

अटल जी का संघ सम्बन्ध एवं राष्ट्र चिन्तन

ऋषि कुमार

अटल बिहारी वाजपेयी की छवि एक कुशल राजनेता, दूरद्रष्टा तथा कालजयी कवि की रही है। उनका व्यक्तित्व विश्वव्यापी एवं सर्वसमावेशी था। राजनीति समाज-जीवन का सबसे कठिन और अहर्निश साधना की मांग करने वाला क्षेत्र है। ऐसी काजल की कोठरी में लगातार ६० साल तक रहने के बाद भी निष्कलंक और वेदाग निकल आना किसी चमत्कार से कम नहीं होता। उनका प्रखर राष्ट्रवाद, संकल्प शक्ति, देशाभिमान, भाषाभिमान, नेतृत्व क्षमता और इन सब श्रेष्ठ गुणों के बाद भी सामान्य बने रहने की क्षमता, यह सब कुछ उनके संघ शाखा प्रशिक्षण एवं स्वयंसेवकत्व के कारण ही संभव हुआ। स्वतन्त्रता के पश्चात् भारत के इतिहास में शायद ही कोई ऐसा राजनेता होगा जो इतने लम्बे समय तक भारतीय राजनीति के केन्द्र में सम्मान और प्रतिष्ठा के साथ कायम रहा हो। कवि हृदय अटल जी का सम्पूर्ण जीवन भारत के उत्कर्ष को समर्पित रहा।

उनकी प्रारम्भिक शिक्षा ग्वालियर में हुई। सन् १९४५ में बी.ए. की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की। उस समय ग्वालियर रियासत का यह नियम था कि जो भी छात्र प्रथम श्रेणी के साथ स्नातक की परीक्षा उतीर्ण करता था उसे आगे की पढ़ाई के लिए ७५ रुपये मासिक छात्रवृत्ति प्रदान की जाती थी। इस प्रकार अटल भी ग्वालियर के शासक से ७५ रुपये मासिक छात्रवृत्ति प्राप्त करके आगे की पढ़ाई के लिए कानपुर आ गए। कानपुर में डी.ए.वी कॉलेज से राजनीतिक विज्ञान में प्रथम श्रेणी में स्नातकोत्तर करने के पश्चात् उन्होंने कानून की पढ़ाई आरंभ अवश्य की थी लेकिन उनका मन राष्ट्र सेवा में सम्पूर्ण जीवन लगा देने का बन चुका था। इसलिए जब पिताश्री ने उनसे विवाह की बात की तो कानपुर में अपने मित्र के घर के एक कमरे में वे बन्द हो गए थे और बाहर से ताला लगवा लिया। तत्पश्चात् सन् १९४६ में घर बार तथा कानून की पढ़ाई बीच में छोड़कर संघ के पूर्णकालिक प्रचारक बन गए।

संघ प्रवेश

अटल का राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से जुड़ने का किस्सा भी दिलचस्प है। उन दिनों ग्वालियर में आर्य समाज के यूथ विंग 'आर्य कुमार सभा' का बोलबाला था। आर्य कुमार सभा आर्य समाज का ही एक युवा संगठन था। जिसका मुख्य ध्येय युवाओं में देश भक्ति की भावना का विकास करना एवं उन्हें राष्ट्र निर्माण के पुनीत कार्य में भागीदार बनाना था। भजन-कीर्तन, देश भक्ति, गीत-संगीत एवं भाषण आर्य कुमार सभा के प्रमुख कार्यक्रम थे। देश के तमाम शहरों एवं कस्बों में आर्य कुमार सभा की बैंठकें हुआ करती थी। बात १९३९ की है। किशोर अटल ग्वालियर में एक रविवार के दिन अपने दोस्तों के साथ आर्य कुमार सभा की साप्ताहिक बैठक में हिस्सा लेने पहुंचे। बैठक शुरू हुई। उसी बैठक में संघ के वरिष्ठ कार्यकर्ता भूदेव शास्त्री का ध्यान युवा अटल पर गया। वह अटल की

वाक्पटुता से काफी प्रभावित हुए। उनके मन में तब विचार आया कि यह बालक तो राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ में होना चाहिए। जैसे ही बैठक समाप्त हुई, भूदेव शास्त्री अटल के पास गए और उनसे पूछा 'तुम शाम को क्या करते हो? अटल ने कहा "कुछ खास नहीं"। तदोपरान्त भूदेव शास्त्री ने अटल को शाम को संघ शाखा में आने का न्यौता दिया।[१]

युवा अटल संघ की शाखा में अपने एक साथी के साथ गए थे। अटल के मोहल्ले में बाबा साहब खानवलकर रहते थे, वे संघ के सक्रिय कार्यकर्ता थे। उनके साथ युवा अटल ने स्थानीय शाखा में जाना शुरू किया। तब ग्वालियर में प्रचारक नारायण राम तरटे थे। बात १९४० की है तरटे जी की जीवन शैली से युवा अटल इतने प्रभावित हुए कि वह निरन्तर शाखा में जाने लगे और संघ के कार्यक्रमों में बढ़ चढ़कर भाग लेने लगे।

संघ शिक्षण

सन् १९४१ में जब अटल जी हाई स्कूल में थे तब उन्होंने संघ का प्रथम वर्ष संघ शिक्षा वर्ग, जिसे OTC भी कहा जाता है, नागपुर में किया। इसके पश्चात् १९४२ में लखनऊ से द्वितीय संघ शिक्षा वर्ग का प्रशिक्षण प्राप्त किया।[२] अटल का संघ के प्रति बढ़ता आकर्षण उनके पिता कृष्ण बिहारी को बिल्कुल भी पसन्द नहीं था। इसके कारण वे अटल को संघ से दूर रखने की कोशिश करते थे। लेकिन अटल कहां मानने वाले थे। संघ तो उनकी रग-रग में बस चुका था। वे पिता जी से चोरी-छिपे संघ के कार्य करते रहे। युवा अटल को संघ प्रशिक्षण वर्गों में होने वाले शारीरिक एवं बौद्धिक कार्यक्रम काफी अच्छे लगते थे। १९४४ में नागपुर से तृतीय वर्ष का प्रशिक्षण प्राप्त करने के पश्चात् अटल ने जीवन भर संघ कार्य करने का निर्णय लिया।

अटल बिहारी वाजपेयी जी का व्यक्तित्व एक स्वयंसेवक के पुण्य प्रवाह का प्रतिबिम्ब है। बात १९४७ की है उन दिनों भाऊराव देवरस उत्तर प्रदेश के प्रान्त प्रचारक एवं दीनदयाल उपाध्याय जी सह प्रान्त-प्रचारक हुआ करते थे। युवा अटल संघ के शिविरों में कविता पाठ किया करते थे जिस पर खूब तालियां बजती थी। उनकी कविताएं हमेशा ही देशभक्ति की भावना से ओत-प्रोत होती थीं। सन् १९४२ में अटल जी ने अपनी प्रथम कविता हिन्दू तन-मन, हिन्दू जीवन, रग-रग हिन्दू मेरा परिचय, जब लिखी थी तब वह १०वीं कक्षा के छात्र थे। यह कविता इतनी प्रसिद्ध हुई कि अटल जी जहां भी जाते उनसे यह कविता सुनाने की फरमाईश की जाती। यह कविता स्वयंसेवकों की प्रेरणा बन गई थी। स्वयंसेवकों ने इस कविता को पूर्णतः कण्ठस्थ कर लिया था। कविता अटल जी को विरासत में मिली थी। पिता पं. कृष्ण बिहारी वाजपेयी जी संस्कृत के प्रसिद्ध विद्धान थे। उनकी रचित कविताएं ग्वालियर के स्कूलों में पढ़ाई जाती थी। संघ शिविरों के दौरान दिन भर के शारीरिक और बौद्धिक कार्यक्रमों के पश्चात् रात को सोने से पहले कुछेक मनोरंजन के कार्यक्रम करवाए जाते हैं। जिनमें देशभक्ति गीत-संगीत, लघुनाटक व कविता पाठ होता है। इन कार्यक्रमों में अटल जी हीरो बन चुके थे।

अटल जी का व्यक्तित्व दिन-प्रतिदिन निखर रहा था। कविताएं तो उनकी ओजस्वी होती ही थी, उनकी वाणी और काव्य पाठ की शैली भी मन्त्रमुग्ध कर लेती थी। बात-बात में व्यंग्य विनोद करते थे। सभी को यह ज्ञात हो गया था कि भविष्य में यह युवा किसी प्रसिद्ध व्यक्तित्व के रूप में उभरेगा।[३]

आदर्श सम्पादक

संघ का कार्य सन् १९२५ में प्रारंभ हुआ। प्रचार का प्रथम माध्यम शाखा एवं स्वयंसेवक ही थे। समाज के सब वर्गों तक पहुंचने के लिए प्रचार के अन्य साधनों की दिशा में बढ़ना भी आवश्यक हो गया था। इसी उद्देश्य को लेकर जुलाई १९४७ में पं. दीनदयाल जी, भाऊराव देवरस व अटल जी की बैठक हुई। इसमें संघ के प्रचार-प्रसार के लिए पत्रिका निकलने का निर्णय लिया गया। पत्रिका का नाम 'राष्ट्रधर्म' तय हुआ। अटल जी इसके प्रथम संपादक बनाए गए। ३१ अगस्त, १९४७ को 'राष्ट्रधर्म' पत्रिका का पहला अंक प्रकाशित हुआ। इसी अंक में पत्रिका के पहले पन्ने पर अटल जी की कविता हिन्दू तन-मन, हिन्दू जीवन, रग-रग हिन्दू मेरा परिचय, प्रकाशित हुई। अटल जी की यह कविता काफी प्रसिद्ध हुई। राष्ट्रधर्म पत्रिका की प्रारंभ में ३ हजार प्रतियां प्रकाशित की गई थी लेकिन मांग अधिक होने के कारण ५०० प्रतियां और प्रकाशित करनी पड़ी। राष्ट्रधर्म में दूसरे अंक की ८ हजार और तीसरे अंक की १२ हजार प्रतियां छापनी पड़ी थी।

राष्ट्रधर्म की सफलता से प्रेरित होकर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने अन्य पत्रिका 'पांचजन्य' निकालने का निर्णय लिया। इसके संपादन का कार्य भी अटल जी को ही सौंपा गया। १ जनवरी १९४८ को पाञ्चजन्य का प्रथम अंक प्रकाशित हुआ। पाञ्चजन्य के साथ ही 'दैनिक स्वदेश' का सम्पादन भी किया गया। इनके अतिरिक्त दिल्ली से प्रकाशित होने वाले दैनिक 'वीर अर्जुन और साप्ताहिक 'वीर अर्जुन' का सम्पादन कार्य भी अटल जी ही संभालते थे। इस प्रकार अटल जी अपने सम्पादक कार्य में जी-जान से लगे रहे। अटल जी कहते थे, ''उन दिनों सम्पादक का कार्य बड़े दायित्व का कार्य समझा जाता था। उसके साथ प्रतिष्ठा भी जुड़ी होती थी। वेतन या अन्य सुविधाओं पर इतना ध्यान नहीं दिया जाता था। केवल जरूरी खर्च भर के लिए ही पैसे लेते थे। सुविधाएं नाममात्र की थी, किन्तु विचारधारा के प्रचार-प्रसार का एक अद्‌भुत संतोष था।[४]

३० जनवरी, १९४८ को महात्मा गांधी की हत्या हुई। तत्कालिक कांग्रेस सरकार, जोकि पहले से ही संघ के प्रचार-प्रसार से ईर्ष्या भाव रखती थी, द्वारा गांधी हत्या का सीधा आरोप राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर लगाया गया तथा संघ को समूल कुचलने के उद्देश्य से सम्पूर्ण देश में इसकी विभिन्न गतिविधियों पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। बहुत सारे निर्दोष स्वयंसेवकों को अकारण ही जेल में डाल दिया गया, अनेक प्रकार की यातनाएं दी गई, लेकिन बुराई कितनी ही शक्तिशाली क्यों न हो वह सत्य से कभी नहीं जीत सकती। अन्ततः न्यायिक जांच में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ निर्दोष सिद्ध हुआ और कांग्रेस सरकार को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर से प्रतिबन्ध हटाना पड़ा। सभी स्वयंसेवकों को रिहा कर दिया गया। लेकिन इस घटना से सीख लेते हुए संघ के उच्च्य पदाधिकारियों के मन में यह

विचार आया कि जब तक हमारे व्यक्ति संसद में नहीं होंगे तब तक हम देश के सामने अपनी बात नहीं रख सकते। इस पुनीत कार्य में संघ को डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी का सहयोग प्राप्त हुआ जिन्होंने नेहरू लियाकत अली समझौते के विरोधस्वरूप नेहरू मन्त्रीमण्डल से त्यागपत्र दे दिया था। गुरु गोलवलकर जी और डॉ. मुखर्जी में विचार-विमर्श के पश्चात् एक राय बनी जिसके परिणामस्वरूप डॉ. मुखर्जी की अध्यक्षता में २१ अक्तूबर १९५१ के दिन नए राजनीतिक दल का निर्माण किया गया जिसका नाम 'अखिल भारतीय जनसंघ' रखा गया।

१९५२ में जनसंघ के निर्माण के समय राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से जो प्रचारक राजनीतिक दल में कार्य करने के लिए भेजे गए, अटल जी भी उनमें से एक थे। राजनीतिक क्षेत्र में जाने के पश्चात् भी अटल जी कभी भी अपनी मूल विचारधारा से दूर नहीं हुए। वह प्रधानमन्त्री के पद पर पहुंचने तक एक स्वयंसेवक के रूप में कार्य करते रहे।

राजनीति का ध्येय सत्ता प्राप्ति नहीं

समय-समय पर साहित्यकारों और पत्रकारों द्वारा अटल जी के अनेक साक्षात्कार लिए गए हैं, जो विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। उनमें से एक पत्रिका 'नवनीत' में अटल जी ने राजनीति के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट करते हुए कहा था कि आज की राजनीति विवेक नहीं वाक्-चातुर्य चाहती है, संयम नहीं, श्रेय नहीं, प्रेय के पिछे पागल है। मतभेद का समादर करना तो अलग रहा, उसको सहन करने की वृत्ति भी विलुप्त हो रही है। आदर्शवाद का स्थान अवसरवाद ले रहा है। सभी अपनी-अपनी स्वार्थपूति में लीन है। सत्ता का संघर्ष प्रतिपक्षियों से नहीं स्वयं अपने ही दल वालों से हो रहा है। पद और प्रतिष्ठा को कायम रखने के लिए जोड़-तोड़ एवं सांठ-गांठ आवश्यक है। निर्भीकता और स्पष्टवादिता खतरे से खाली नहीं है। आत्मा को कुचलकर ही आगे बढ़ा जा सकता है।[४] राजनीति की राहों पर बहुत सोच विचार कर चलना पड़ता है। थोड़े से असंतुलन से गिरने की नौबत आ जाती है। अटल जी ने संघ के प्रचारक और आदर्श सम्पादकत्व के बाद राजनीतिक क्षेत्र में आजीवन राष्ट्रधर्म का पालन किया। वास्तव में राजनीति उनके लिए साधन नहीं साध्य थी। उनका मानना था कि सत्ता ऐसी होनी चाहिए जो हमारे जीवन मूल्यों के साथ बंधी हो। ऐन-केन प्रकारेण सता प्राप्ति के वे प्रखर विरोधी थे। अपनी इसी आदर्शवादिता के कारण उन्होंने १९९८ में १३ महीने की सरकार में एक मत की कमी रहने पर भी प्रधानमन्त्री पद से त्याग पत्र दे दिया था। सता में बने रहने के लिए उन्होंने जोड़-तोड़ की राजनीति का सहारा नहीं लिया। अटल जी का कहना था कि 'हमें भारत की जनता व भारतीय लोकतन्त्र पर पूर्ण विश्वास व आस्था है और हम फिर लौटकर आएंगे और भारी बहुमत के साथ आएंगे।'

जब २००२ में गोधरा दंगों के पश्चात् केन्द्र सरकार को चौतरफा आलोचना का सामना करना पड़ रहा था तब अटल जी ने तत्कालिक गुजरात के मुख्यमन्त्री नरेन्द्र मोदी जी को राजधर्म का पालन करने तक की हिदायत दे डाली थी। अटल जी का कहना था कि एक राजा को प्रजा में किसी

तरह का भेद नहीं करना चाहिए। प्रजा के हित में ही राज्य का हित निहित होता है।

अटल बिहारी वाजपेयी जी पहले ऐसे स्वयंसेवक थे जो विदेश मन्त्री और बाद में प्रधानमन्त्री बने। अटल जी ने अपनी स्वयंसेवक से प्रधानमन्त्री पद तक की यात्रा पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि 'मात्र सत्ता प्राप्ति हमारा लक्ष्य नहीं रहा। किन्तु यह एक कटु यथार्थ है कि बिना सत्ता के हम राष्ट्र जीवन में अपेक्षित परिवर्तन नहीं ला सकते। यहां तक कि हमारे रचनात्मक कार्यों को भी अवरुद्ध किए जाने की कोशिश की जाती रही है। सरस्वती शिशु मन्दिरों पर जिस तरह से प्रतिबन्ध लगाए गए या जिस तरह से उन्हें सहायता देने में आपति की जाती है, उससे भी बढ़कर जिस तरह से इस देश में राष्ट्रीय मानस को कुंठित करने का प्रयास होता है, संघ पर प्रतिबन्ध लगाते हैं, व्यवहार में भेदभाव करते हैं, उससे लगता है कि हमें लोकशक्ति के बल पर राजशक्ति अर्जित करने के अलावा और कोई रास्ता नहीं रहा।[६]

अटल जी राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से राजनीतिक क्षेत्र में आए थे। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की विचारधारा में काम करते-करते उनका कद बढ़ता गया लेकिन वैचारिक निष्ठा जस की तस रही। उन्होंने हिन्दू और हिन्दुत्व को भारत की जीवनशैली बताया और अयोध्या में राममन्दिर निर्माण को राष्ट्रवाद की भावनाओं की अभिव्यक्ति कहा। उन्होंने राजनीति में भारतीय संस्कृति का प्रवाह पैदा किया।[७] ७० के अन्तिम दशक में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से उनके मतभेद को लेकर बातें उठने लगी। लेकिन दोहरी सदस्यता के प्रश्न को लेकर जनता पार्टी से अलग होते समय अटल जी ने कहा था कि **'भला वो संघ से कैसे दूर हो सकते हैं वहां से तो हमारी नाल बंधी है, हमारा जन्म वहीं से हुआ है।'** जनता पार्टी से अलग होते हुए उन्होंने भारी मन से कहा था कि वह मातृ संगठन को कभी नहीं छोड़ सकते।[८]

हिन्दू राष्ट्र सम्बन्धी विचार

अटल जी कहा करते थे 'यह सच है कि हिन्दू शब्द एक सीमित अर्थ में प्रयुक्त होने लगा है। हिन्दुत्व किसी विशेष उपासना पद्धति का द्योतक नहीं, बल्कि एक जीवन-रचना का परिचायक है। जिसके अन्तर्गत अनेक सम्प्रदायों, मत-मतान्तरों तथा उपासना पद्धतियों का समावेश होता है। सनातनी, आर्य समाजी, जैन, बौद्ध, सिख, कबीरपंथी आदि सभी एक परिवार के सदस्य है। यहां तक कि नास्तिक हिन्दू भी हिन्दू समाज के ही भाग है। किन्तु दुर्भाग्य से हिन्दू शब्द का अर्थ सिकुड़ गया है। हमें उसका विस्तार करना है। किन्तु जब तक यह विस्तार नहीं हो जाता, तब तक 'भारतीय' शब्द का प्रयोग अधिक व्यवहारिक है। 'भारतीय' में न केवल हिन्दुओं का समावेश होता है अपितु उन जनसमूहों को भी गिना जाता है जो राष्ट्रीयता से हिन्दू अथवा भारतीय, किन्तु उपासना पद्धति से पारसी, ईसाई अथवा मुसलमान हैं।'[९] अटल जी इस बात से भली भान्ति परिचित थे कि हिन्दुओं में भी ऐसे लोग हैं जो विदेशी शक्तियों के इशारों पर चलते हैं। भारत से बाहर निष्ठा रखने वाले सभी वर्गों को हमें भारत निष्ठ बनाना है। इसके लिए प्रत्येक भारतीय के हृदय में राष्ट्रभाव को जागृत करना होगा। भारतीयकरण के बजाय 'भारत पहले' शब्द का प्रयोग उपयुक्त होगा।

अटल जी हिन्दुत्व का अर्थ स्पष्ट करते हुए कहा करते थे कि हम अपनी संस्कृति की मान्यताओं के अनुसार अपना जीवन बिताएं और उसी के अनुरूप देश में एक आदर्श व्यवस्था निर्मित करें। ऐसी व्यवस्था जो हमारी मान्यताओं का हल प्रस्तुत कर सके और संसार के सामने एक आदर्श उदाहरण प्रस्तुत कर सके। समाज इस दिशा में बढ़ और बदल रहा है। विवेकानन्द जी को एक महान आध्यात्मिक नेता और समाज सुधारक के रूप में स्वीकार किया जाना, इसी परिवर्तन का द्योतक है।[१०]

अटल जी का मानना था कि दुर्भाग्य से हिन्दुओं को स्वयं को हिन्दू कहने में संकोच की स्थिति पैदा हुई तो इसका मुख्य कारण यह था कि गांधी की हत्या एक हिन्दू ने की थी और उस समय के राजनीतिक नेताओं ने उस हत्या का लाभ उठाकर उदात्त हिन्दुत्व का प्रचार करने वाले राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को प्रतिबन्धित कर दिया। दुर्भाग्य से हिन्दुत्व हिन्दू महासभा के साथ जुड़ गया। वह कालखण्ड बीत चुका है। लेकिन अब एक दूसरी समस्या पैदा हो गई है। हिन्दू अपने को हिन्दू कहें तो मजहब के कारण इस्लाम को मानने वाले अपने आपको मुसलमान कहेंगे। फिर इस देश में अपने को भारतीय कौन कहेगा? आज यह संतुलन बिठाने की आवश्यकता है कि हम गर्व से कहें कि हम हिन्दू है मगर उसी सांस में यह भी कहें कि हम भारतीय है। हम मुसलमानों से भी यह आशा करते है कि वे अपने को मुस्लिम भारतीय नहीं, भारतीय मुसलमान कहें। यद्यपि हिन्दुत्व उस अर्थ में एक प्रार्थना पद्धति नहीं है जिस अर्थ में इस्लाम या ईसाइयत है, लेकिन जब हम हिन्दू धर्म शब्द का उपयोग कर रहे हैं तो हम कुछ सीमा खींचते हैं, कुछ दीवारें खड़ी करते हैं। यहां भी संतुलन बनाए रखने की आवश्यकता है।

अटल जी का कहना था कि हिन्दुत्व के प्रति गर्व प्रतिक्रिया में से उत्पन्न नहीं होना चाहिए। यदि लोग इस प्रतिक्रिया से हिन्दू हो रहे हैं तो दूसरे लोग प्रतिक्रिया में और भी कट्टर होंगे। अटल जी विधायक तत्वों के आधार पर ही वर्तमान की दुविधा को हल करने के पक्ष में थे। उनका मानना था कि भारत में हिन्दू बहुसंख्या में है, इसलिए हमारा दायित्व अधिक है।[११]

अटल जी कहा करते थे कि देश का विभाजन और उससे पहले स्वतन्त्रता की लड़ाई में विशेषकर तिलक, लाला लाजपतराय और मालवीय जी के बाद कांग्रेस में ऐसे नेता उभरकर नहीं आए जो हिन्दुत्व की बात भी करते और सारे भारत के प्रतिनिधि भी होते। उसके पश्चात् विभाजन हुआ, हिन्दू-मुसलमान के बीच की खाई बढ़ती गई। लेकिन हिन्दू कभी मुस्लिम विरोधी नहीं रहा। जब मैंने हिन्दू तन-मन, हिन्दू जीवन कविता लिखी थी तो मेरे मन में मुस्लिम विरोध का भाव नहीं था। लेकिन जैसे-जैसे मुसलमान लीग के नेतृत्व में स्वतन्त्रता के विरोधी होते गए, मुस्लिम विरोध की भावना बढ़ती गई। यह विरोध इसलिए नहीं था कि वे इस्लाम के मानने वाले थे, बल्कि इसलिए था कि वे स्वतन्त्रता के विरोधी थे और हर हाल में अपने लिए पृथक राज्य मांग रहे थे।[१२]

विभाजन के पश्चात् मुसलमानों के दिमागी पुनर्वास की आवश्यकता थी। यह काम सही शिक्षा, शुद्ध संस्कार तथा आर्थिक, सामाजिक बराबरी की गारंटी देने से हो सकता था, लेकिन इस

दिशा में कदम उठाने की वजाए शासन ने मुस्लिम समस्या को सदैव कांग्रेस पार्टी के चश्मे से ही देखा जिसके कारण हिन्दू मुस्लिम समस्या सुलझने की बजाए उलझती चली गई।

अटल जी ने प्रधानमन्त्री रहते हुए एक बार पुणे में भाषण देते हुए हिन्दुत्व के बारे में कहा था, **''मैं हिन्दू हूं, यह मैं कैसे भूल सकता हूं? किसी को भूलना भी नहीं चाहिए। मेरा हिन्दुत्व सीमित नहीं है, सकुंचित नहीं है, मेरा हिन्दुत्व हरिजन के लिए मन्दिरों के दरवाजे बन्द नहीं कर सकता। मेरा हिन्दुत्व अर्न्तजातीय, अर्न्तप्रान्तीय और अन्तर्राष्ट्रीय विवाहों का विरोध नहीं करता है। हिन्दुत्व सचमुच बहुत विशाल है।''**

अटल जी का पूरा जीवन ही हिन्दू राष्ट्र व हिन्दू संस्कृति के लिए समर्पित रहा। पांचजन्य में प्रकाशित हिन्दू धर्म पर एक निबन्ध में उन्होंने लिखा, **''हिन्दू धर्म के प्रति मेरे आकर्षण का मुख्य कारण है कि यह मानव का सर्वोत्कृष्ट धर्म है। हिन्दू धर्म न तो किसी एक पुस्तक से जुड़ा है और न ही किसी एक धर्म प्रवर्तक से जुड़ा है, जो कालगति के संग असंगत हो जाते हैं। हिन्दू धर्म का स्वरूप हिन्दू समाज द्वारा निर्मित होता है और यही कारण है कि यह धर्म युग युगान्तर से सबन्धित और पुष्पित होता जा रहा है।''**

राष्ट्रभाषा को दिलाया गौरव

जिस समय अंग्रेजी बोलने वाले राजनेताओं का रुतवा हुआ करता था उस समय अटल जी ने संयुक्त राष्ट्र संघ में भारत के विदेश मन्त्री के रूप में हिन्दी में भाषण करते हुए विश्व मंच पर सर्वप्रथम राष्ट्रभाषा को गौरव का स्थान दिलाकर एक नए अध्याय का सूत्रपात किया था। जिसके परिणामस्वरूप भारत वापसी उपरान्त उनका पूरे देश में सम्मान किया गया। यह अटल जी का ही प्रसिद्ध कथन था कि **'हिन्दी की बात करने की बजाए हमें हिन्दी में बात करनी चाहिए।'** हमें अपनी मातृभाषा में बोलते समय किसी प्रकार का संकोच नहीं होना चाहिए। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की 'निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति कौ मूल' उक्ति में पूरी तरह विश्वास करने वाले अटल जी ने संयुक्त राष्ट्र संघ में अपने भाषण से भारतेन्दु जी की उक्ति को पूर्णतः चरितार्थ किया। उनके भाषण में निहित संदेश, उसकी सम्प्रेषणीयता एवं उसके स्तर ने भी सबको प्रभावित किया।[१३]

अटल जी एक सर्वमान्य नेता थे। उनका पूरा जीवन ही हिन्दू राष्ट्र व हिन्दू संस्कृति के लिए समर्पित रहा। उनकी ओजमयी वाणी और भाषण शैली का ही जादू था कि उनके भाषण सुनने के लिए विरोधी भी अपने आपको रोक नहीं पाते थे।

उदारवादी एवं दूरद्रष्टा नेता

अटल जी कहा करते थे कि जब मुझे उदार विचारों वाला कहा जाता है तो लोग यह भूल जाते हैं कि विचारों की यह व्यापकता और उदारता दीनदयाल जी की ही देन है। स्व. भाऊराव देवरस और पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी का स्मरण करते हुए अटल जी की आंखे भर आती थी ... उनके सत्संग में गुजारे क्षणों को याद करते हुए अटल जी कहते थे कि किस तरह उन्होंने अंगुली पकड़कर पत्रकारिता की डगर पर चलना सिखाया। किस तरह से व्यक्ति के विकास के लिए प्रयास करना, लेकिन उसका विकास होना है, उसे पता तक न लगने देना कि यह सारा प्रयास उसके विकास के लिए है। यही संघ की विशेषता है। दीनदयाल जी तो इस सम्बन्ध में अद्वितीय थे। अद्वितीय संगठनकर्ता,

चिन्तक, विचारक....।[१४]

अटल जी एक साहसी, दृढ़ निश्चयी एवं दूरद्रष्टा नेता थे। भारत को परमाणु शक्ति सम्पन्न राष्ट्र बनाने में उनका अतुलनीय योगदान रहा। सन् १९९८ में प्रधानमन्त्री बनने के मात्र दो महीने के बाद ही उन्होंने अमेरिका को धत्ता बताते हुए पोखरण में परमाणु परीक्षण करवाया। अमेरिका व अन्य यूरोपीय देशों द्वारा भारत पर आर्थिक प्रतिबन्ध लगा दिया गया लेकिन यह अटल जी की ही दृढ़ता थी कि उन्होंने पश्चिमी ताकतों के आगे झुकने से मना कर दिया। उनके द्वारा ही पूर्व प्रधानमन्त्री स्वर्गीय श्री लाल बहादुर शास्त्री जी के 'जय जवान, जय किसान' नारे के साथ 'जय विज्ञान' को भी जोड़ा गया। जोकि भारत की तकनीकी क्षेत्र में बढ़ती वैज्ञानिक शक्ति का द्योतक था।

युगपुरुष अटल जी का सम्पूर्ण जीवन एक अखंड साधना थी। उनका जीवन इस बात का प्रत्यक्ष उदाहरण है कि संघ की शाखाओं के संस्कार व्यक्ति को किस तरह सामाजिक जीवन के कठिनतम क्षेत्रों में भी सफल और यशस्वी बना देते हैं। अटल जी भले ही शारीरिक रूप से हमारे बीच नहीं रहे, पर अपने कृतित्व के माध्यम से सदैव हमारे बीच रहेंगे।

संदर्भ :

१. नाग, किंगशुक (२०१५) Atal Bihari Vajpayee : A Man for all Seasons, Rupa Publications - New Delhi, P 1-2

२. ऑर्गेनाइजर पत्रिका में प्रकाशिक लेख 'संघ मेरी आत्मा' (दिनांक ३० जनवरी, १९९५ श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी की आत्मकथा की कुछेक पंक्तियां।

३. त्रिपाठी, विश्वनाथ, ''अन्तिम नेहरूवादी राजनीतिज्ञ' इंडिया टुडे पत्रिका, दिनांक ५ सितम्बर, २०१८, पृ. ५७

४. शर्मा, डॉ. चन्द्रिका प्रसाद, पृ. ४६

५. शर्मा, डॉ. चन्द्रिका प्रसाद, पृ. ११

६. वहीं, पृ. २३

७. दीक्षित, हृदयनारायण, भारतीय राजनीति के विरल महानायक 'दैनिक जागरण समाचार पत्र में प्रकाशित लेख, दिनांक १७ अगस्त २०१८

८. साक्षात्कार, मुरली मनोहर जोशी, दैनिक जागरण, दिनांक १७ अगस्त, २०१८

९. शर्मा, डॉ. चन्द्रिका प्रसाद, पृ. ३६-३७

१०. वही, पृ. ६३

११. वही, पृ. ५८-५९

१२. वही, पृ. ६१

१३. पांचजन्य, साप्ताहिक पत्रिका, २६ अगस्त, २०१८, पृ. १३

१४. शर्मा, डॉ. चन्द्रिका प्रसाद, पृ. २५

शोधार्थी, राजनीतिक विज्ञान विभाग

हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला - ५ (हि.प्र.)

भागवतपुराण कालीन इतिहास

डॉ. कृष्ण मोहन पाण्डेय

पुराण भारतीय इतिहास के सबसे विशाल स्रोत हैं जो मानव जीवन के क्रमिक विकास का सांगोपांग विवेचन करते हैं। पुराणों का विस्तार सुदीर्घ परम्परा का द्योतक हैं। वैदिक वाङ्मय से लेकर ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् आदि साहित्य में अनेक बार पुराणों का उल्लेख हुआ है। वैदिक वाङ्मय की दुरूहता को लोक में स्पष्ट करने के लिए पुराणों की रचना हुई थी। पुराण १८ की संख्या में विद्यमान है इन सभी पुराणों में देवताओं के अवतारवाद से लेकर जीवन के सम्पूर्ण स्वरूप का व्याख्यान हुआ है। पुराणों की अपनी एक विशेष शैली है जिससे जीवन रहस्य को बहुत सरलता से समझाने का प्रयास किया गया है। इन पुराणों में श्रीमद्भागवत पुराण को सर्वाधिक महत्व दिया गया है जो मोक्ष के साथ जीवन की समस्त शैलीयों को बहुत सरलता से अनेक कथानकों के माध्यम से प्रस्तुत करता है। पुराणों को अलौकिक शास्त्र कहा गया है वेदों के समान इनका स्वरूप सर्वदा के लिए निश्चित नहीं है अपितु समय के परिर्वतन के साथ इनके प्रभाव एवं आकार में परिवर्तन देखा जाता है। पुराण पुराने होकर भी सर्वथा नवीन रहते हैं और कालान्तर में उत्पन्न होने वाले हर प्रकार के परिवर्तनों को आत्मसात् कर लेते हैं। पुराणों का उद्देश्य भी पुराण स्वयं बताते हैं कि –

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशोमन्वन्तराणि च। वंशानुचरितं चैव पुराणानि प्रचक्षते।।

इतिहास की परिभाषा को ध्यान में रखकर जब हम अतीत में इतिहास का अन्वेषण करते हैं तब अपनी दृष्टि को ऐतिहासिक साक्ष्य के अनुसार बहुत व्यापक दृष्टिकोण की आवश्यकता हो जाती है। हड़प्पा, मोहनजोदड़ों और लोथल के ऐतिहासिक आधार इतिहास को भौतिक पदार्थों के अनुसार उद्घाटित करते हैं। भारतीय इतिहास का घटनाक्रम और साक्ष्य के अन्य आधार भी अन्वेषणीय हैं। इसकी आवश्यकता को ध्यान में रखकर इतिहास को अन्य साक्ष्यों के आधार पर भी एक बार फिर से खंगालने को हम विवश हुए हैं, जिनमें सबसे बड़ा आधार भारतीय मनीषा का वह वाङ्मय हैं जिसकी विपुलता वैज्ञानिकता और आध्यात्मिकता के समक्ष पूरा विश्व आदर के साथ नतमस्तक होता है। सृष्टि की आरम्भिक प्रकृति पर वैज्ञानिक तथ्यों को प्रस्तुत करने वाला वेद मानव की कल्पना से परे है। सम्पूर्ण विश्व की प्रकृति को संचालित करने के इस संविधान को भारत की धरा का आदिम काल से देखने का गौरव हमारे लिए अद्भुत है। भारत का इतिहास विश्व के इतिहास में सबसे प्राचीन है। परम ब्रह्म से उत्पन्न ऋषियों, देवताओं और दिव्य पुरुषों को मानवीय इतिहास के पुरातन काल में जिस दिव्य ज्ञान का चाक्षुष और श्रौत साक्षात्कार हुआ उसे ही हम आज वेद के नाम से जानते हैं। वेदों में वर्णित मानवीय साक्ष्यों के आधार पर भारतीय मनीषा आदिम काल से यह उद्घोष करती आयी है कि मनुष्य

कभी भी बन्दरों का वंशज नहीं है। ऋग्वेद के मन्त्र **'तस्माद् विराडजायत विराजोऽधिपुरुषः'** के अनुसार परमात्मा ने मनुष्य को विराट पुरुष के रूप में सर्वप्रथम उत्पन्न किया। मनुष्यों का आदिम इतिहास यहीं से शुरू होता है। अत्यन्त गति से गम्यमान भौतिक युग में आज यह बहुत अपेक्षित भी है कि हम अपने अतीत के यथार्थ स्वरूप को ठीक से जाने, इस दृष्टि से मानव के व्यावहारिक संविधान के रूप में प्रतिष्ठित वेद भारतीय इतिहास के सबसे प्रमाणिक स्रोत हैं। वेदों की गंभीर और दुरुह शैली को सरल और सुगम बनाने के लिए प्राचीन ऋषियों ने पुराणों के माध्यम से लोक में सम्पूर्ण मानवीय इतिहास को व्याख्यायित करने का सफल प्रयास किया। इस क्रम में अनेक पुराणों की रचना हुई। १८ हजार श्लोकों में निबद्ध श्रीमद्भागवत पुराण के प्रथम श्रवण का प्रमाण पद्म पुराण में इस प्रकार वर्णित है –

आकृष्णनिर्गमात् त्रिंशद्वर्शाधिगते कलौ। नवमीतो नभस्ये च कथारंम्भं शुकोऽकरोत्।
परीक्षिच्छ्रवणान्ते च कलौ व शितद्वये। शुद्धे शुचौ नवम्यां च धेनुजोऽकथयत्कथाम्।
तस्मादपि कलौ प्राप्ते त्रिशंद्वर्शगते सति। ऊचुरूर्जे सिते पक्षे नवम्यां ब्रह्मणः सुताः।।

अर्थात् भगवान् श्रीकृष्ण के स्वर्ग चले जाने के बाद व्यास जी के पुत्र श्री शुकदेव जी राजर्षि परीक्षित को सुनाने के लिए भाद्रपद शुक्ल नवमी कलिसंवत् युग के तीस वर्ष से कुछ अधिक जाने पर भागवत् कथा आरम्भ की। इसके बाद दूसरी बार श्री गोकर्ण ने धुन्धकारी को प्रेतयोनि से मुक्त कराने के लिए २३० कलिसंवत् आषाढ़ शुक्ल नवमी को भागवत कथा सप्ताह प्रारम्भ किया। तीसरी बार सनकादि ऋषियों ने कार्तिक शुक्ल नवमी २६० कलिसंवत् को कथा प्रारम्भ किया। तात्पर्य यह है कि भागवत पुराण की रचना कलियुग के प्रारम्भ होने के तीस वर्ष बाद अर्थात् (वर्तमान कलिसंवत् ५१२०-३०) = ५०९० वर्ष पूर्व हो चुकी थी। इस पुरण ग्रन्थ के रचयिता कृष्णद्वैपायन व्यास के मस्तिष्क में कथा लेखन से पूर्व क्या भूमिका थी यदि हम उसे समझने में सफल हो जायें तो भारतीय इतिहास और संस्कृति का मुख्य उद्देश्य हमें आसानी से समझ में आ जायेगा। निःसन्देह भारतीय विचार धारा मोक्ष को ही अन्तिम लक्ष्य मानती आयी है, इसी परम्परा को आगे बढ़ाते हुए यह पुराण भी जीवन के समस्त कर्मों को करते हुए मोक्ष मार्ग को प्रशस्त करता है। व्यास जी ने इस पुराण में कथा के माध्यम से तात्कालिक एवं पूर्ववर्ती भारतीय इतिहास को बहुत सरलता से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। ग्रन्थ का आलोकन करने से भारतीय इतिहास के अनेक साक्ष्य परत दर परत खुलते हैं। विष्णुधर्मोत्तरपुराण की टीका में श्रीधर स्वामी द्वारा उल्लिखित इतिहास की जो स्पष्ट परिभाषा दृष्टिगोचर होती है वह इतिहास के स्वरूप और उद्देश्य को आमूलचूल उद्घाटित कर देती है।

धर्माथकाममोक्षाणामुपदेशसमन्वितम्। पूर्ववृत्तं कथायुक्तमितिहासं प्रचक्षते।

अतीत सम्बन्ध वैश्विक परिदृश्य को संसार में व्याप्त साक्ष्यों के आधार पर भारतीय मनीषियों द्वारा प्रदत्त कालविषयक चिन्तन, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक, मनोवैज्ञानिक, वर्णव्यवस्था, नारीसमाज, शिक्षणव्यवस्था आदि समस्त ऐतिहासिक विषयों का अध्ययन करके भारतीय इतिहास के गौरव को वैश्विक पटल पर पुनर्स्थापित

किया जा सकता है। इस प्रकार साहित्यिक एवं आध्यात्मिक प्रमाणों के आधार पर कृत शोध से सामाजिक संरचना को सुगठित करने वाली मानव सभ्यता की ऐतिहासिक अस्मिता संसार के समक्ष प्रकाशित होगी।

'श्रीमद्‌भागवत पुराण' में पुराणों के लक्षणों में प्रायः पांच विषयों का उल्लेख किया गया है, किन्तु इसमें दस विषयों -सर्ग-विसर्ग, स्थान, पोषण, ऊति, मन्वन्तर, ईशानुकथा, निरोध, मुक्ति और आश्रय का वर्णन प्राप्त होता है। पुराणों के क्रम में भागवतपुराण लोकप्रियता की दृष्टि से यह सबसे अधिक प्रसिद्ध है। १८ हजार श्लोकों में निबद्ध इस पुराण को महापुराण कहते हैं। यह भक्तिशाखा का अद्बितीय ग्रन्थ माना जाता है और आचार्यों ने इसकी अनेक टीकाएं की हैं। कृष्ण-भक्ति का यह आगार है। साथ ही उच्च्य दार्शनिक विचारों की भी इसमें प्रचुरता है।

'श्रीमद्‌भागवत पुराण' में काल गणना भी अत्यधिक सूक्ष्म रूप से की गई है। पदार्थ के सूक्ष्मतम स्वरूप को 'परमाणु' कहते हैं। दो परमाणुओं से एक 'अणु' और तीन अणुओं से मिलकर एक 'त्रसरेणु' बनता है। तीन त्रसरेणुओं को पार करने से सूर्य किरणों को जितना समय लगता है, उसे त्रुटि' कहते है। त्रुटि का सौगुणा 'कालवेध' होता है और तीन कालवेध का एक 'लव' होता है। तीन लव का एक 'निमेष', तीन निमेष का एक क्षण तथा पांच क्षणों का एक 'काष्ठा' होता है। पन्द्रह काष्टा का एक 'लघु', पन्द्रह लघुओं की एक 'नाड़िका' अथवा 'दण्ड' तथा दो नाड़िका या दण्डों का एक 'मुहूर्त' होता है। छह मुहूर्त का एक 'प्रहर' अथवा 'याम' होता है। एक चतुर्युग (सत युग, त्रेता युग, द्वापर युग, कलियुग) में बारह हजार दिव्य वर्ष होते हैं। एक दिव्य वर्ष मनुष्यों के तीन सौ साठ वर्ष के बराबर होता है। प्रत्येक मनु ७,१६,११४ चतुर्युगों तक अधिकारी रहता है। बह्मा के एक 'कल्प' में चौदह मनु होते हैं। यह ब्रह्मा की प्रतिदिन की सृष्टि है। सोलह विकारों (प्रकृति, महतत्त्व' अहंकार, पांच तन्मात्राएं, दो प्रकार की इन्द्रियां, मन और पंचभूत) से बना यह ब्रह्माण्डकोश भीतर से पचास करोड़ योजन विस्तार वाला है। उसके ऊपर दस-दस आवरण हैं। ऐसी करोड़ों ब्रह्माण्ड राशियां, जिस ब्रह्माण्ड में परमाणु रूप में दिखाई देती हैं, वही परमात्मा का परमधाम है। इस प्रकार पुराणकार ने ईश्वर की महत्ता, काल की महानता और उसकी तुलना में चराचर पदार्थ अथवा जीव की अत्यल्पता का विशद् विवेचन प्रस्तुत किया है।

सृष्टि-उत्पत्ति के संदर्भ में इस पुराण में कहा गया है — एकोऽहम्बहुस्यामि। अर्थात् एक से बहुत होने की इच्छा के फलस्वरूप भगवान स्वयं अपनी माया से अपने स्वरूप में काल, कर्म और स्वभाव को स्वीकार कर लेते हैं। तब काल के तीनों गुणों - सत्व, रज और तम में क्षोभ उत्पन्न होता है तथा स्वभाव उस क्षोभ को रूपान्तरित कर देता है। तब कर्म गुणों के महत्त्व को जन्म देता है जो क्रमशः अहंकार, आकाश, वायु, तेज, जल, पृथ्वी, मन, इन्द्रियां और सत्व में परिवर्तित हो जाते हैं। इन सभी के परस्पर मिलने से व्यष्टि-समष्टि रूप पिंड और ब्रह्माण्ड की रचना होती है। यह ब्रह्माण्ड रूप अण्डां एक हजार वर्ष तक ऐसे ही पड़ा रहा। फिर भगवान ने उसमें से सहस्र मुख और अंगों वाले

विराट पुरुष को प्रकट किया। इस विराट पुरुष के मनुष्य उत्पन्न हुए। विराट पुरुष रूपी नर से उत्पन्न होने के कारण जल को 'नार' कहा गया। यह नार में रहने वाला बाद में 'नारायण' कहलाया। कुल दस प्रकार की सृष्टियां बताई गई हैं। महत्तत्व, अहंकार, तन्मात्र, इन्द्रियां, इन्द्रियों के अधिष्ठाता देव 'मन' और अविद्या, ये छह प्राकृत सृष्टियां हैं। इनके अलावा चार विकृत सृष्टियां हैं, जिनमें स्थावर वृक्ष, पशु-पक्षी, मनुष्य और देव आते हैं।

पुराणों का जब हम सांस्कृतिक दृष्टि से आलोडन करते हैं तो हमें ज्ञात होता है कि शाश्वत-मूल्यों में परिवर्तन व्यक्ति, देश और राष्ट्र को पतन की ओर उन्मुख करते हैं जबकि वेश-भूषा आदि में परिवर्तन संस्कृति में परिवर्तन है जो व्यक्ति को नवीनता की ओर ले जाता है। हर समय एक प्रकार के वस्त्र, भोजन, कार्यशैली, जीवन को उबाऊ बनाते हैं अतः नूतनता चाहिए। शाश्वत मूल्यों में परिवर्तन मानव का ह्रास करता है, उसकी मानसिकता को दूषित करता है, अतः यह अनापेक्षित है। भागवत की संस्कृति वैदिक संस्कृति है जो विराट पुरुष से सृष्टि की उत्पत्ति मानती है।

भागवत-पुराण की सांस्कृतिक दृष्टि से विद्या या ज्ञान का अधिकारी वही है जो विनम्र है, श्रद्धावान् है तथा स्वार्थरहित है। ज्ञान लेना और देना इतना सरल नहीं था। यहां यह संस्कृति रही है कि ज्ञान श्रद्धावान् को ही दिया जाता है। ऋषि गण सूत जी से ज्ञान ग्रहण करने के लिए अनुरोध करते हैं और बताते हैं कि आप में हमारी श्रद्धा है, अतः आप हमें बताए ब्रूहि नः श्रद्धानां (भा.पु. 1.1.11)। अपि च ज्ञानदाता जितेन्द्रिय होना चाहिए। उसे ज्ञान लेकर श्रोता दक्षिणा अवश्य दे क्योंकि मुफ्त में लिया गया ज्ञान भी व्यर्थ ही होता है। (भा.पु. मा. 5.66) कहा भी गया है कि लोभवश अर्जित किया जाने वाला ज्ञान फलित नहीं होता है। कारिता कणलोभेत कथासारस्ततो गतः।। भागवत पुराण की संस्कृति उदारता की संस्कृति है। वह पुराण को सुनने का अधिकार निर्धन, क्षयरोगी, पापी, पुत्रहीन आदि सभी को देती है। अपि च, सभी स्त्रियां इसके ज्ञान की भागी हैं। भागवत पुराण (4.1.63-64) कन्याओं को सुयोग्य बनाने के साथ-साथ उन्हें ज्ञान-विज्ञान एवं ब्रह्मज्ञान के क्षेत्र में पारंगत देखना चाहता है।

भागवत पुराण में विस्तृत रूपेण वर्ण और आश्रम के धर्मों का विवेचन है। अतः भा.पु. की संस्कृति वर्णाश्रम धर्म की संस्कृति है। वर्ण और आश्रम धर्म वैदिक संस्कृति के आधार स्तम्भ हैं। वर्णाश्रम की संस्कृति ही ऐसी संस्कृति है जिसमें गुण और कर्मों के आधार पर वर्णों का विवरण है तथा आयु के आधार पर आश्रमों का। यह सब जीवन को अनुशासन बद्ध करता है, जो परमावश्यक है। सभी वर्ण अपने-अपने कर्म करे तो यह कुछ सुव्यवस्थित रहेगा। वस्तुत गुण और कर्म पर आधारित यह वर्ण व्यवस्था व्यक्ति को अपना वर्ण चुनने की स्वच्छन्दता देती है। यह उदार परम्परा है। यदि वैश्य अध्यापन और याजन आदि करना चाहता है तो वह ब्राह्मणवर्ण का चयन कर सकता है। इस प्रकार उसकी जाति, वैश्य है परन्तु वर्ण ब्राह्मण है। दूसरी ओर यदि व्यक्ति अपने पारम्परिक व्यवसाय को ही चयन करता है तो यह कर्मणः वर्ण हुआ। पुनश्च आश्रम व्यवस्था परिवार और समाज को सुव्यवस्थित

रखती है। आयु के प्रथम भाग में ज्ञानार्जन, द्वितीय भाग में गृहस्थ, तृतीय भाग में वानप्रस्थ तथा चतुर्थ भाग में सन्यास की व्यवस्था, परिवार और समाज को अनुशासित करती है।

भागवत पुराण की संस्कृति पुरुषार्थ चतुष्ट्य को बहुत मान्यता देती है। चार पुरुषार्थों धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में प्रथम तीन जीवित रहते हुए व्यक्ति के हैं और चतुर्थ मृत्युपरान्त का। मोक्ष व्यक्ति को तीनों आश्रमों का नियमपूर्वक पालन करने पर ही प्राप्त होता है। धर्म के लिए अर्थ और अर्थ के लिए काम अर्थात् धन को धर्म में लगाए और तदनुसार अपनी इच्छाओं की पूर्ति करे। (भा.पु. 10.5. 28) में भी त्रिवर्ग को स्वजनों के सुखार्थ माना है तथा लक्ष्य अर्थात् मोक्ष प्राप्ति का मार्ग भी।

भागवत पुराण की संस्कृति यज्ञों की संस्कृति है। गृहस्थी के लिए (भा.पु. 11.17.50) में वेदाध्ययन अर्थात् ब्रह्मयज्ञ, तर्पण अर्थात् पितृयज्ञ, हवन करना अर्थात् देवयज्ञ, करक, श्वान आदि को बलि देना अर्थात् भूतयज्ञ तथा अन्न, जल आदि से मनुष्य की सेवा करना अर्थात् अतिथि यज्ञ को करना आवश्यक बताया गया है। **वेदाध्यायस्वधस्वाहाबल्यन्नाद्यैश्वर्ययथोदयम्। देवर्षिपितृभूतानि मद्रूपायन्वहं यजेत्।** ऐसे ही अनेक सांस्कृतिक विषयों का विस्तार से प्रतिपादन हुआ है। यह सत्य है कि कुछ संस्कृतियां बदलती है और कुछ अक्षुण्ण रहती हैं। वेद से लेकर आज तक भारतीय संस्कृति में कुछ संस्कृतियां प्रारम्भ से प्राप्त है यथा सत्य, अहिंसा वैदिक धर्मों की मान्यता परन्तु संस्कारों को अपनाना वस्त्र, आभूषण, आश्रमव्यवस्था का नवीनीकरण आदि संस्कृति का परिवर्तित रूप है। हम पश्चिम की ओर आकृष्ट हैं और पश्चिम हमारी ओर। इस प्रकार कुछ संस्कृतियां तो सार्वभौमिक हो गई हैं। वस्तुत संस्कृति ही व्यक्ति को सुखद मार्ग का दर्शन कराती है। इस प्रकार हम पाते हैं कि भागवत पुराण में मानव को उन्नत एवं सुदृढ़ तथा संयमी बनाने की संस्कृति सुचारू रूप से उल्लिखित है। सभी ग्रन्थों से स्पष्ट होता है कि कुछ संस्कृतियां समय के साथ-साथ बदलती रहती हैं। यह भी कहना अनुचित नहीं होगा कि किसी भी परिवार, समाज या राष्ट्र की संस्कृति कुछेक परिवर्तनो के साथ अक्षुण्ण रहती है और यही अक्षुण्णता ही परिवार, समाज या राष्ट्र की महत्ता है। वस्तुतः प्रत्येक व्यक्ति शारीरिक तथा मानसिक क्षमता की दृष्टि से समान नहीं होता। समाज तथा राष्ट्र के सर्वतोन्नमुखी विकास में सभी अपनी क्षमता के अनुसार योगदान दे सकें और उसके प्रति अपने उत्तरदायित्व को अनुभव करे यही वर्णव्यवस्था का निहितार्थ था। कालचक्र के प्रभाव से परिवर्तित होती हुई सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों का प्रभाव वर्ण व्यवस्था पर भी पड़ा। जिस व्यवस्था का विधान व्यक्ति के प्राकृतिक गुणों तथा योग्यताओं के आधार पर किया गया था वह शास्त्रों के मूल भावों से च्युत होती हुई रूढ़ीवादी स्वरूपधारिणी बन कर रह गई। फलतः सामाजिक समरसता के स्थान पर सामाजिक असुन्तलन का विस्तार होने लगा। भागवत-महापुराण में जहां एक ओर वर्ण-व्यवस्था के मूलभूत स्वर चित्त को आह्लादित करता है तो वहीं दूसरी ओर काल और मति के प्रभाव से आए विकास चिन्तन-प्रक्रिया को आन्दोलित भी करता है। उद्धव द्वारा वर्णाश्रम-धर्म सम्बन्धी प्रश्न करने पर श्री कृष्ण बतलाते हैं कि आरम्भ में अर्थात् सत्युग में हंस नामक एक ही वर्ण था। उस युग में लोग जन्म से ही कृतकृत्य होते थे।

इसी कारण से उस युग का एक नाम कृतयुग भी था। 'हंस' नामक एक ही वर्ण के होने के कारण यह बतलाया गया है कि उस समय लोग 'हंसस्वरूप' विशुद्ध परमात्मा की ही उपासना करते थे, प्रणव ही 'वेद' रूप में स्वीकृत था तथा तपस्या, शौच, दया और सत्य इन चार चरणों से युक्त श्रेष्ठ धर्म की सत्ता कही गई है। इसके अनन्तर त्रेतायुग में ऋग्वेद, सामवेद और यजुर्वेद की तथा यज्ञों की सत्ता बलताई गई है।

आधुनिक युग में इतिहास लिखने की पृथक परम्परा ने पूर्ववर्ती आचार्यों की परम्परा को न मानकर उनके प्रति अश्रद्धा का जो भाव प्रदर्शित किया है उससे आधुनिक युग की नई पीढ़ी भारतीय इतिहास के ज्ञान से वंचित हो रही है। भारतीय इतिहासकारों का दृष्टिकोण समाज में समानता को जीवित रखने का था। जिसके लिए प्रत्येक मनुष्य का धर्मानुकूल आचरण आवश्यक था। समाज में जो श्रेष्ठ आचरण था वहीं अनुकरणीय था इतिहास इसी अनुकरणीय चरित को जीवन में उतारने के लिए लिखा गया। आज के युग में भारत का प्राचीन इतिहास आज भी उतना ही प्रासंगिक है जितना पूर्व काल में था। इतिहास के ज्ञान से हमारा चरित उत्तम होता है, यही संदेश भारतीय इतिहासकारों का रहा है। उनका ज्ञान और जीवन में आचरण हमारा परम कर्तव्य है।

सहायक-आचार्य संस्कृत,
राजकीय महाविद्यालय डोहगी, बंगाणा,
जिला - ऊना (हि.प्र.)

गतिविधियां

प्यार चन्द परमार

दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी (२१ - २२ जुलाई, २०१८)

ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान नेरी में कलियुगाब्द ५१२०, विक्रमी संवत् २०७५, आषाढ़ शुक्ल ९- १० (२१-२२ जुलाई, २०१८) में **श्रीमद्भागवत पुराण कालीन इतिहास** विषय पर दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। संगोष्ठी के उद्घाटन सत्र में मुख्यातिथि श्री राम कुमार गौतम रहे। सत्र की अध्यक्षता डॉ. वेद प्रकाश अग्नि ने की। संगोष्ठी से सम्बन्धित बीज वक्तव्य डॉ. ओम दत्त सरोच प्राचार्य संस्कृत महाविद्यालय चकमोह ने दिया। उद्घाटन सत्र में संस्थान अध्यक्ष, श्री विजय मोहन कुमार पुरी विशेष रूप से उपस्थित रहे। शोध संस्थान द्वारा संचालित गतिविधियों की रूपरेखा डॉ. ओम प्रकाश शर्मा ने सभी के सम्मुख प्रस्तुत की। संगोष्ठी की भूमिका डॉ. कृष्ण मोहन पाण्डेय ने प्रस्तुत की। उन्होंने श्रीमद्भागवत पुराण में वर्णित इतिहास के विभिन्न पक्षों पर विस्तृत चर्चा की। मुख्यातिथि श्री राम कुमार गौतम ने शोध संस्थान द्वारा संगोष्ठी के विषय के चयन को महत्वपूर्ण बताते हुए कहा कि इससे सम्बन्धित इतिहास की विभिन्न प्रकार की जानकारियां समाज के सम्मुख आएंगी। कुल १० शोध पत्र पढ़ गए और ९० विद्वानों ने भाग लिया।

श्रीमद्भागवत पुराण अनुशीलन सत्र (गोष्ठी) (२ जुलाई, २०१८, ५ अगस्त, २०१८ व २ सितम्बर, २०१८)

पुराणानुसंधान योजना के अन्तर्गत श्रीमद्भागवत पुराण अनुशीलन मासिक गोष्ठियों का आयोजन २ जुलाई, ५ अगस्त व २ सितम्बर, २०१८ को ोध संस्थान में किया गया। २ जुलाई, २०१८ को श्री चेतराम गर्ग ने राजा परीक्षित के जीवन पर शोध पत्र पढ़ा। गोष्ठी की अध्यक्षता रणजीत सिंह गुलेरिया ने की। ५ अगस्त, २०१८ को आयोजित मासिक गोष्ठी की अध्यक्षता श्री प्यार चन्द परमार ने की। मुख्य वक्ता डॉ. ओम दत्त सरोच प्राचार्य संस्कृत महाविद्यालय चकमोह ने श्रीमद्भागवत पुराण के पहले स्कन्द के दो अध्यायों में वर्णित सृष्टि रचना व अवतारवाद पर विस्तृत चर्चा की। २ सितम्बर, २०१८ को आयोजित श्रीमद्भागवतपुराण अनुशीलन मासिक गोष्ठी की अध्यक्षता डॉ. सोम देव ने की।

ठाकुर रामसिंह की ८वीं पुण्यतिथि (६ सितम्बर, २०१८)

ठाकुर रामसिंह की ८वीं पुण्यतिथि पर पुष्पाजंलि अर्पण एवं हवन यज्ञ का आयोजन संस्थान में किया गया। उनकी स्मृति में 'कर्मयोगी ठाकुर' कविता पाठ श्री मंजलसी राम वैरागी ने किया। कार्यक्रम में संस्थान सचिव भूमिदत्त शर्मा, निदेशक प्रेम सिंह भरमौरिया, श्री सुरेन्द्र नाथ शर्मा, कोषाध्यक्ष नरेन्द्र कुमार नन्दा, श्री प्यार चन्द परमार, व्यवस्थापक इतिहास दिवाकर, डॉ. विकास शर्मा, डॉ. अजय बन्याल, राजेश शर्मा व जमनादास अग्निहोत्री सहित कई कार्यकर्ता मौजूद रहे।